Chapter. 4

अध्याय चतुर्थ

आधुनिक दोहा छंद में अभिनव प्रयोग

भारतीय काव्य परम्परा में ''दोहा'' अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित एवं लोकप्रिय छंद रहा है। अपनी भाविक एवं सामासिक संरचना में मात्रिक छन्द के रुप में इसका प्रचलन बहुत पुराना है।

दोहा प्रबंधकाव्य रचना के साथ-साथ मुक्तक काव्य रचना के लिए भी विशेष उपयोगी है। सैकड़ों वर्षो से हिन्दी के कवि इस छन्द के द्वारा वीर भक्ति, नीति और श्रृंगार काव्य की रचना करते आये हैं। दोहा छन्द को हिन्दी भाषा ने अपभ्रंष से ग्रहण किया है। अपभ्रंष काल में दोहा जैन कवियों का प्रसिद्ध छंद रहा है। हेमचंद्रकृत सिद्धहेमचंद्रानुसासन, मुनि रामसिंह कृत 'पाहुण दोहा' तथा देवसेन कृत 'सावधम्मदूहा' इसकाल के जैन कवियों की प्रसिद्ध कृतियां हैं, जिनमें मुख्यतः दोहों की रचना देखी जा सकती है। सिद्ध सरहपा तथा कण्हपा कृत ''दोहा कोष'' इस काल के सिद्धों के ग्रंथ है। 'दोहा' का प्रयोग नाथ पंथियों के साहित्य में भी हुआ है। अपभ्रंस में दोहे का प्रयोग मुख्यतः चार प्रकार से हुआ है (1) निर्गुण प्रदान और धार्मिक उपदेश मूलक दोहे (2) श्रृंगारी दोहे (3) नीति विषयक दोहे (4) वीर रस दोहे।

'दोहा' के विकास की दृष्टि से हिन्दी का भक्तिकाल महत्वपूर्ण समय रहा है। इस काल क्रम में दोहे की प्रस्तुति में पर्याप्त वैविध्य आया, भक्तिकाल की सही पहचान इन्हीं दोहों से मिलती है। इस काल में भक्तिभावों का स्वर जोरों से गूँज रहा था, चारों ओर अध्यात्म पर ही चर्चा चल रही थी। देश की प्रजा तत्कालीन शासन से त्रस्त थी। अतः भगवान के सिवाय उनका और कोई आधार न था, परिणाम स्वरुप परमात्मा पर आस्था निष्ठा रखते हुए भक्ति प्रधान रचनाओं का सृजन

हुआ इसी काल में ! कबीर, तुलसी जायसी, रहीम, गिरधर, वृन्द जैसे रचनाकार हुए जिनके कारण इस काल में दोहा छन्द साहित्य जगत का सिरमौर बनकर अपने सामर्थ्य का डंका बजवाता रहा है।

अपनी सशक्त अभिव्यक्ति, लघुता और गेयता के कारण दोहा छंद, श्रुति रन्ध्रों के माध्यम से स्मृति पटल पर स्थायी रुप से रचबस जाने का सामर्थ्य रखता है। इसी कारण अपने उद्भव काल से ही दोहा लोक चेतना का संवाहक रहा है। मानवीय नैतिक मूल्यों एवं सांस्कृतिक सरोकारों का संवाहक यह छंद बड़े-बडे घाघ, भड्डरी जैसे कवि पंडितों और मौसम के विज्ञ रसज्ञ रचनाकारों के माध्यम से खेतों पर काम करते किसानों अनपढ मजदूरों और जनसाधारणों को मार्गदर्शन देता रहा है।

जहाँ एक ओर नवीन आन्दोलन में पुरातन मिथकों के सहारे समकालीन विमूधर्मिता को नयी उर्जा देकर छांदस लेखन की ओर पुरस्तर किया वहीं दूसरी तरफ दुष्यंत कुमार के प्रयोगवाद ने गजल विद्या को हिन्दी में नये आयाम देकर मानवीय संवेदना के कारुणिक सरोकारों को संयोजित कर परवर्ती रचाकारों को सामाजिक वैद्रूप्य से संघर्ष करने हेतु साहित्यिक क्रान्ति की आधारशिला रखकर छांदस समृद्धि के सोपान विनिर्मित करने का साहसिक शुभारम्भ किया। इसी प्रकार हिन्दी काव्य के समर्थ सर्जकों ने इस सदी के अंतिम दशकों में लोक जीवन के कण्ठहार पारंपरित छन्द 'दोहा' का देशकाल और परिस्थिति के अनुरुप पर्याप्त परिमार्जनकर हाँशिये से पृष्ठ के आमुख पर लाने का सफ़ल एवं वंदनीय उपक्रम किया।

आज ऐसे सक्षम् विद्वानों के द्वारा दोहा छन्द में नये-नये विषयों को लेकर सर्जन हो रहे हैं। मानव जीवन एवं प्रकृति के विभिन्न भावों व संवेदनाओं पर आधुनिक दोहाकारों ने दोहे पर अभिनव प्रयोग किये हैं।

आधुनिक समय में जहाँ मानव के विचार व क्रिया कलाप बदल गये हैं तो वहीं आज के सामाजिक, राजनैतिक बैद्रुष्य ने दोहे के भी तेवर बदल दिये हैं, परम्परा से अलग इन आधुनिक दोहों में जो वर्ण्य समाविष्ट हैं वह प्रासंगिक तथा समयानुकूल विषयों से सम्बद्ध हैं। इसमें धर्म, नीति, प्रार्थना, उपदेश आदि विषय से हटकर हमारी दैनिक समस्याओं एवं जीवन्त परिवेश से सम्बन्धित व्यथा कथा को अंकित किया गया है। मुख्य रुप से राजनीतिक विषंगतियाँ, सामाजिक उत्पीडन तथा वैचारिक असंतुलन की ओर ध्यान दिया गया है। इन दोहों में हमारी घरेलू संस्कृति भी है और पारिवारिक उलझने भी हैं। आधुनिक दोहाकारों के दोहों में यह असर स्पष्ट दिखाई देता है जो नित नये होनेवाले अभिनव अर्थ प्रयोगों की ओर संकेत भी करते हैं, इसी प्रकार के कुछ समसामयिक

संदर्भो से जुडे तथा अभिनव वर्ण्य से संलग्न दोहे दृष्टव्य हैं।

डॉ. अनन्तराम मिश्र मानवता को केन्द्र में रखकर कहते हैं -

युग के बीहड में बढे, इतने वृश्चिक वंश।
हैं मावनता को मिले, कदम-कदम पर दंश ।।[1]

डॉ. अजय जनमेजय चापलूसी पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि -

चाटुकार पाने लगे, अब अभिनंदन पत्र।
अक्सर हत प्रभ हीं मिलीं, प्रतिभाएं सर्वत्र।।[2]

श्री दिनेश शुक्ल बच्चों के बदलते मानसिक विचार पर देखादेखी पर लिखते हैं -

बच्चों को भाते नहीं, हाथी, गुडिया, रेल।
चोर सिपाही खेल के, जहाँ खेलते खेल।।[3]

आज की बदलती हुई सभ्यता और संस्कृति को लेकर तथा पाश्चात्य देखादेखी व अपने को आधुनिक बनाने में लगे समाज को सचेत करते हुए कवि डॉ. राम सनेही लाल 'यायावर' कहते हैं कि -

लंगडी घोड़ी सभ्यता, अंधा मनुज सवार।
अगर गिरा तो टूटकर, होंगे खण्ड हज़ार।।[4]

उपर्युक्त सब दोहों में प्रायः कथ्य की मौलिकता, अनुभूति और संवेदना की व्यग्रता और नूतन विम्ब धर्मिता के विस्तृत आयाम दिये हैं।

विशुद्ध खड़ी बोली में लिखे जाने वाले आधुनिक दोहों में लोक चेतना के मूल तत्वों और सुपरिचित मंगलकारी मानवमूल्यों का सन्निवेश कर, सामाजिक विकृतियों एवं रुढिगत पाखण्डों के विखण्डन हेतु सुदृढ संकल्प समायोजित हैं।

आधुनिक दोहों की रचना में लगे रचनाकार संख्या में बहुत हैं जिन्होंने दोहे को नये-नये कथ्य से समृद्ध किया है और उस नये कथन को प्रस्तुत करने के लिए उन्होंने नये-नये विम्बों का प्रयोग किया है। प्रत्यग्र विम्ब विधान एक ओर तो नये कथ्य को सम्प्रेषणीय लालित्य प्रदान करता है वहीं दूसरी और पुराने कथ्य को भी एक नयी सुगन्ध भरने में सफल हुआ है। 'सप्तपदी'. एक ऐसा ही सम्पादन है जिसे श्री देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' द्वारा सम्पादित किया गया है। इस संग्रह में अनेक आधुनिक दोहाकारों की रचनाओं का संग्रह है। सप्तपदी के खण्डशः प्रकाशन की योजना

को भी आधुनिक कविता के वृहत्तर परिप्रेक्ष्य से अलग करके नहीं देखा जा सकता। ऐसी ही श्री अशोक अंजुम द्वारा सम्पादित दोहा संग्रह की योजना है जिसमें श्रेष्ठ आधुनिक दोहाकारों के दोहों का संग्रह मिलता है। यह आत्म श्लाघा न होकर एक तथ्य संगत सचाई है कि इन योजनाओं ने वर्तमान छन्दोबद्ध कविता के द्वार पर एक सार्थक दस्तक दी है।

दोहा अपने आदि समय से ही उच्च विचारों एवं भावनाओं का संवाहक रहा है। प्रत्येक दोहाकार के दोहों में अपनी अलग ही भावनाएं लिप्त हैं, समाज, राजनीति, प्रकृति, मनोविज्ञान, श्रृंगार विश्व बन्धुत्व, मानवीकरण, प्रतीकों एवं विम्बों के अभिनव प्रयोग आदि वर्ण्य विषय का विस्तृत फलक देखने को मिलता है।

आधुनिक भावनाओं से ओतप्रोत सामयिक रचनाकारों ने अभिनव प्रयोग के द्वारा आज देश समाज में चल रहे विभिन्न क्रिया-कलापों का प्रतिबिम्ब खींचा है।

आधुनिक दोहा छन्द में दोहाकारों ने अनेक विषयों पर अभिनव प्रयोग किये हैं जिनमें सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, साहित्यिक, श्रृंगारिक आदि विभिन्न विषयों का वर्णन मिलता है। आज मुख्य रुप से राजनीतिक विसंगतियाँ एवं सामाजिक उत्पीडन तथा वैचारिक असंतुलन, देश की सबसे बडी समस्या बनी हुई है।

दोहों का अभिनव सामाजिक सरोकार

आज मानव समाज एक दूसरे को देखकर ईर्ष्या करता है। कोई किसी का भला नहीं चाहता अपने से आगे बढ रहे की टांग खींच कर गिरा दिया जाता है, परन्तु यहाँ रचनाकार प्रकृति से विम्ब लेकर मानव से कहता है कि -

बरगद तुलसी में नहीं, होती है तकरार।
रहते हिलमिल प्यार से, कदली औं कचनार॥[4]

तुलसी और बरगद दोनों ही पूज्य हैं। किसी की अधिक पूजा होती है तो किसी की कम, फिर भी साथ साथ रहकर आपस में कभी तकरार नहीं करते साथ ही श्री कृष्णेवर डींगर जी कहते हैं कि ''आज समाज की कुछ ऐसी व्यवस्था हो गयी है कि कुछ लोग बिना चाकरी किये ही सारी सुख सुविधाओं को लूट रहे हैं' और कुछ के लिए हर संभावना की खिड़की बंद है कहने का तात्पर्य है कि आज चापलूसी की हवा इतनी विशैली है कि लायक व्यक्ति भी बिना चापलूसी के नालायक ही सिद्ध होता है। अर्थात् कवि कहता है कि -

बिना चाकरी किये कुछ, लूट रहे निर्द्वन्द।
प्रभु ने औरों को किये सभी झरोखे बंद।।[6]

समाज में मानव की उत्पीडन बहुत ही बढ़ चुकी है। सामयिक रचनाओं में मुख्यतः मानव समाज को ही केन्द्र में रखकर विभिन्न अनुभवित भावों का वर्णन किया गया है। आज भले ही इरादे, हौंसले बुलन्द हैं और आँखों में सागर भरा है, परन्तु अन्तर मन में भारी संवेदनाएँ व पहाड भरे हुंए हैं, जीवन का कोई दृश्य ही नहीं दिखाई देता फिर भी मावन अपने अस्तित्व को सार्थक करने के लिए इस संसार में दिन रात हाड़ तोड़ मेहनत कर रहा है। श्रीकृष्ण शर्माजी के ऐसे भाव वास्तव में उनकी रचनाओं में उनके गहन अनुभव का परिणाम प्रस्तुत करते हैं -

आँखों में सागर भरे मन पर धरे पहाड़।
देह हुई मरुथल मगर फिर भी फोड़े हाड़।।[7]

आज मानव समाज में फैला अकेलापन, और यदि किसी यार दोस्त का साथ है तो मात्र स्वार्थ बस ऐसे ही भाव दोहाकार के निम्न दोहे में वर्णित हैं।

संग साथ थे जो कभी बन लंगोटिया यार।
वे कपूर-से उड़ गये, सात समंदर पार।।[8]

आज मनुष्य-मनुष्य का नही रहा सभी स्वार्थी हैं। इस संसार की भाग दौड़ में कोई किसी के लिए नही रुकता है जिसे जहाँ अच्छी जगह मिलती है। वहीं खिसक जाता है जैसे हवा में खुला पाकर कपूर उड जाता है। पता भी नहीं चलता ऐसे ही संगी साथी समय बदलते ही साथ छोड कर चल देते हैं। इसी लिए तो आज मानव समाज ऐसी विडम्बनाओं से बचने के लिए कुत्ता, बिल्ली, बन्दर जैसे जानवरों के साथ मित्रताकर उन्हे अपना साथी बनाना अधिक पसंद करता है। उपर्युक्त दोहा में कवि ने मानव समाज में व्याप्त बहुत बडी विडम्बना का वर्णन बहुत ही मार्मिकता के साथ किया है। जो सामयिक विषय को लेकर नये भावों की अभिव्यक्ति है। और ऐसी विडम्बना के लिए किसी के भी मन मे कोई रंज नहीं है। सभी स्वार्थ से कार्यशील हैं। वह आत्मीयता अब नही रही जो दूसरे का दर्द दुःख देख द्रवति हो जाया करती थी। आँखों में सिर्फ अपना अपना ही स्वार्थ और सद्भाव बचा है, उनमें अब पानी नहीं रहा जो आँसू बनकर द्रवित हों -

आँखों का पानी मरा, मरा स्नेह-सद्भाव।
सबके अपने स्वार्थ हैं, सबके अपने दाँव।।[9]

पाश्चात्य सभ्यता के आने से आज के बदलते समय में स्वार्थ का भाव जन-जन में व्याप्त

हो गया है। आज वह कहावत भी सत्य हो रही है कि ''बाप बडा न भैया सबसे बडा रुपैया!'' अतः रिश्तों मे अब आत्मीयता नहीं रही, जिससे रिस्तों में आयी कटुता का ज़हर सम्पूर्ण मानव समाज पी रहा है। समाज में फैले वैचारिक असंतुलन के कारण आज भैया नीम के समान कड़वे हो गये हैं और दीदी बबूल के काँटों के समान चुभने लगी है जो पिता कभी अगहनी धान और माँ पके हुए मगही पान जैसी हुआ करती थी वह आज अच्छी नहीं लगती, रिश्तों में आयी ऐसी विभीषिका का वर्णन करते हुए दोहाकार कहता है कि -

रिश्तों के बदले हुए, दिखते सभी उसूल।
भैया कड़वे नीम से, दीदी हुई बबूल।।(10)

रेत-रेत जबसे हुए आपस के व्यवहार।
मुरझाये दिखने लगे सब उत्सव त्योहार।।(11)

समाज की यह वास्तविकता को श्री माहेश्वर तिवारी ने बड़ी ही मार्मिकता के साथ वर्णित किया है, एक बहुत बड़ा परिवार छोटे-छोटे टुकड़ों में बट गया है। वैचारिक असंतुलन के कारण भी सारे उत्सव-त्योहार सूने हो गये हैं। और यदि जहाँ कोई साथ भी है तो वहाँ अपनी दूसरे के साथ होड़ लगाये हुए हैं । मानव समाज में व्याप्त ऐसी उत्पीडन, करुणा को आज के आधुनिक दोहाकार ने बड़ी ही मार्मिकता से दोहा छंद में बाँध कर एक अभिनव वर्ण्य विषय को प्रस्तुत किया है । आज रोजी-रोटी की खोज में मनुष्य न जाने कहाँ-कहाँ भटक रहा है। जिसके कारण एक आवास को छोड़कर दूसरा आवास तलाश करता है। स्वजन परिवार से अलग होकर दूर जाना पडता है परिणाम स्वरुप जो जहाँ जिस ठौर जाता है वहीं झुग्गी झोपड़ियों का निर्माण भी करता है। मानव जीवन की ऐसी खानाबदोसी परिस्थिति का वर्णन करते दोहाकार कहता है-

गये निवाला ढूँढने, लोग जहाँ जिस ठौर।
झुग्गी झोपड़ियाँ बढ़ीं, शहर-दर-शहर और।।(12)

वैसे तो दोहे में युगान्तर से अनेक प्रयोग होते चले आ रहे हैं परन्तु हर एक नये काल में वर्णित प्रयोगों को ही अभिनव प्रयोग कहा गया है। आज अनेक दोहाकार ऐसे प्रयोगकर दोहे की कीर्ति वृद्धि कर रहे हैं, समकालीन यथार्थ को उन्होंने बड़ी ही कुशलता के साथ पाठकों के सामने रखा है। आज समाज में नई-नई समस्याएं, विडम्बनाएं ही ऐसे विषय बन गयी हैं कि मावन का जीवन उन्हीं में पिस रहा है, सामाजिक समस्या में दहेज की समस्या अपने आप में वह दूषण है जिसमें हजारों ज़िन्दगियाँ बर्बाद हो गयीं हैं, इसी सामाजिक दूषण को केन्द्र में रखकर दोहाकार कहता है -

सगुन चिरैयों को रहे, उल्लू गिद्ध खदेड़।
क्वाँरी बुलबुल हो रही, दौलत बिना अधेड़।।[13]

उपर्युक्त दोहे में दोहाकार ने सामाजिक वर्ण्य को सटीक विम्ब के माध्यम से अपनी बात कह दी है। आज दहेज प्रथा इतनी तीव्र हो गयी है कि धन के अभाव से कवाँरी लडकियाँ अधेड हुई जा रही हैं और उनकी शादी नहीं हो पा रही और जिन लडकियों की शादी हो गयी है उनका वही हाल है जो उल्लू और गिद्धों के बीच फँसी हुई चिडिया का होता है अर्थात दहेज समाज पर लगा वह कलंक है जिसे सबसे बड़ी समस्या माना जा सकता है, और आज ऐसी ही समस्या की ओर दोहाकार की दृष्टि जाती है और दो टूक शब्दों में वह अपनी बात साफ कह देता है कि कुदरत की सबसे सुन्दर बनायी हुई इस संसार की नेह्म के क्या हाल हैं।

रक्षागृह ऐसे हुए ज्यों कि शेर की माँद।
जहाँ पहुँच घायल हुए, घूँघट वाले चाँद।।[14]

आज जब रक्षक ही भक्षक बन गये हैं तो कहाँ? और किस पर भरोसा किया जा सकता है आज स्वंय मानव ही मानव का कट्टर हो गया है। समाज की इसी उत्पीडन का अनुभव कमजोर हमेशा करता रहा है आज रक्षा गृह शेर की माँद के समान हो गये हैं। अब किसी की कहीं खैर नहीं बेसहारा को कहीं सहारा नहीं आदि भाव उपर्युक्त दोहे में साफ नज़र आते हैं जो कवि के गहन चिंतन एवं अनुभव का परिणाम है।

लोगों से समाज बनता है और समाज में ही लोग रहते हैं अतः लोगों के दु-ख-सुख भी सामाजिक विषय के केन्द्र में रहते हैं। अतः विरह की वेदना से ग्रसित भाव कवि ने निम्न दोहे में रचकर वियोगिनी का दुःख वर्णन किया है।

बिन आँगन का घर मिला, बसे पिया भी दूर।
आग लगे इस पूस में, खलता है सिन्दूर।।[15]

दोहाकार कैलाश गौतम ने सौ टके की बात सहज ही कह दी है। साथ ही इसी संदर्भ में रामानुज त्रिपाठी कहते हैं।

झाँक–झाँक कर ओट से, लुक छिप खोल किवाड़।
दिन तो काटे गट गए, रातें हुयीं पहाड़।।[16]

आज के रहन-सहन व परिवेश का चित्र भी प्रस्तुत कर दिया है। एक तो बिन आँगन का घर अर्थात आज की आधुनिक रहन-सहन (फ्लेट, सोसायटी, आदि) का जीवन जिसमें न आँगन

न खुली जगह, इससे मन और परेशान! यदि आँगन होता तो रात में विरहिन तारे तो गिन सकती थी पर यहाँ यह भी संभव नहीं एवं पिया भी दूर और ऊपर से पूस की रात, इन सबके कारण विरहिन को अपना सुहागन होना भी खल रहा है। यहाँ पर दोहाकार ने मानव जीवन की बहुत बड़ी विभीषिका का पर्दाफास किया है । पिय तो रोजी रोटी के लिए परदेश पड़ा है यहाँ अकेली प्रियतमा (पत्नी) विरह के कड़वे घूँट पी रही है, मानव जीवन की इस बडी विडम्बना को वर्णित कर दोहाकार ने वास्तव में अभिनव वर्ण्य प्रयोग प्रस्तुत किया है जिसमें समाज का प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखाई देता है।

आज दोहाकारों की लेखनी महज, रानीवास और अटारी से निकलकर सड़क, गली, तक आ गयी है वह आम जनता के साथ चल रही है जहाँ मध्यकाल में मात्र कवियों को सुंदर ही सुंदर दिखाई देता था। वहीं परम्परा से हटकर आधुनिक कवि की नज़र कंकड पत्थर तोडनेवाले श्रमिकों तक गई है। इन कवियों ने इन श्यामवर्णी, गठीले शरीर सौष्ठव वाली स्त्रीयों का वर्णन किया है-

हाड़-हाड़ हैं गोपियाँ, तार-तार है छींट।
कंकड़-पत्थर तोड़ती, ढोतीं गारा-ईंट।।[17]

इस प्रकार कवि उपर्युक्त दोहे में परिश्रमी मजदूर महिलओं का वर्णन करता है जो अपने आप में एक नया वर्ण्य प्रयोग है । इन महिलाओं की तार-तार होती हुई पोशाक और मेहनत मजूरी से हाड-हाड होते हुए तन का मार्मिक वर्णन दोहा में है जो आधुनिक मानव समाज में यत्र-तत्र देखते ही बनता है। आधुनिक युग के बदलते हावभावों सोचविचारों के कारण मानव अपने सामाजिक अनुशासन को भूलता जा रहा है जिसके कारण मानव आपसी व्यवहार में अनेक उत्पीड़नों का सामना करता है। दोहाकार इन्ही मानव मूल्यों के ह्रास होने पर दुःखी भी है और एक आवाज लगाते हुए वेद प्रकाश पाण्डेय कहते भी हैं कि-

मूल्य, मान, करुणा, क्षमा, प्रेम, शील, ईमान।
इनका पहले, आज सा, हुआ न था अपमान।।[18]

दोहाकार कहता है कि मानवता के ह्रास होने से आज समाज मे अनेक प्रकार की पीडाओं को मानव झेल रहा है। चारों ओर ईर्ष्या का भाव इन्ही मानव मूल्यों के समाप्त होने से बढ़ा है। अतः दोहाकार आधुनिक समस्या पर साफ-साफ कहकर अपना कवि धर्म निभा रहा है।

एक ज़माने से बेटी पराया धन ही मानी गयी है। समाज में चल रही इस प्रथा पर दोहाकार प्रश्न भी करता है कि-

एक बाप है, एक माँ, फिर क्यों भिन्न विधान।
बेटे मालिक, बेटियां हैं घर की मेहमान॥[19]

समाज में व्याप्त इस दुनियाँ के दस्तूर को कवि बरबस ही समाज के सामने लाता है और स्वीकार भी करता है -

बेटा-बेटी एक-से, फिर भी भेद अटूट।
एक पास है, दूसरा, बरबस जाता छूट॥[20]

डॉ. उर्मिलेश ने वास्तविक आधुनिक सोच रखकर नये वर्ण्य का प्रयोग किया जो अपने में समाज को राह दिखाकर उस पर विचार भी करने का आग्रह करते हैं। इस प्रकार मानव जीव से जुडे सामयिक दोहों में वर्ण्य देखते ही बनते हैं। आज समाज में वह स्थिति चल रही है कि मनुष्य अपनों से प्रेम भाव की जगह धृणा, द्वेष ही पा रहा है। आज मनुष्य गैरों से प्रेम की उम्मीदें बाँधने लगा है ऐसे ही भावों को व्यक्त करते हुए सुरेश कुमार शुक्ल जी कहते हैं -

अपने ही देने लगे, जब से हर पल दंश।
हृदय-देश में बढ रहे पीडाओं के वंश॥
पहले तो तुमने दिया स्नेह मुझे भरपूर।
अब क्यों भागे जा रहे, मुझसे कोसों दूर॥[21]

आज साहित्यकार अपनी-अपनी शैली में जीवन की विकृतियों, असांस्कृतिक प्रवृत्तियों, राजनीतिक, सामाजिक असंगतियों पर चित्रण कर रहा है। आज के समान में युवा पीढी के बढ़ते हुए संघर्षमय जीवन का चित्रण भी दोहाकार बड़ी ही कुशलता से कर रहे हैं। आज प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी तनाव या दुःख से ग्रस्त है तो ऐसे में हम किसे अपना हाल कहें -

जिन्हें सुनाने हम गए, यारो अपना हाल।
वे हमसे बेहाल थे, वे हमसे वाचाल॥[22]

आगे अशोक अंजुम कहते हैं कि मानव समाज न जाने क्या प्राप्त करने के लिए भागम भाग का जीवन जी रहा है और अनेक कष्टों को सह रहा है, उसके पास फुरसत के दो पल भी नहीं है जिनको वह सकून से जी सके। समाज में कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो इस संसारिक मोह को त्याग कर शांति पाना चाहते हैं। पर अनेक मर्यादाएं व कर्तव्य उनके पाँव में बेडीयाँ डाल देते हैं। जीवन में ऐसी ही उत्पीडन को लेकर आज के दोहाकार श्री अशोक अंजुम कहते हैं कि-

फुरसत के दो पल नहीं हरदम भागम भाग।
किसे खबर किस खुशी का, ढूंढे शहर सुराग।।(23)

चलो निकल जायें कहीं, लेकर अपनी पीर।
लेकिन पाँवों में पडीं, बडी-बडी जंजीर।।(24)

युग-दर्शन से पीडित तृषित जिन्दगी अपनी व्यथा-कथा को बाँचती हुई सर्वत्र दिखलायी पडती है, आज के युगीन जीवन को दोहाकारों ने बडी ही नजदीकी से जिया है, अतः वह जीवन के सभी पक्षों से भली भांति परिचित है। इसी जीवन का एक दृश्य प्रस्तुत करते हुए दोहाकार अनंतराम मिश्र 'अनंत' कहते हैं -

अंगारे तकिया बने, कुण्ठा-कण्टक सेज।
पूरा जीवन हो गया, दुःख का दस्तावेज।।(25)

पहले घर कच्चे रहे, थे पक्के ईमान।
अब घर पक्के बन गये, पर कच्चे इंसान।।(26)

आधुनिक सृजन प्रणाली को केन्द्र में रखकर कवि ने दोहे में निश्चय ही अभिनव वर्ण्य को प्रस्तुत किया है जो निश्चय ही सामयिक युग में सत्य का बोध करता है। अतिभौतिकतावादी समाज में आज मर्यादा एवं नैतिकता का हास होता जा रहा है। झूठ-फरेब, चाटुकारिकता और कूटनीति के कारण समाज में अनेक असंगतियाँ फैली हुई है। जिनमें बगुला, हंस से प्रतिस्पर्द्धा कर रहा है और वैश्या पातिव्रत्य का उपदेश दे रही है ऐसे ही भाव को दोहाकार डॉ. ध्रुवेन्द्र भदौरिया व्यक्त करते हैं -

बगुले ने भाषण दिया, चला-चलाकर चोंच।
माँसाहारी हंस के, पंख लीजिये नोंच।।(27)

कथनी-करनी का हुआ परिवर्तित परिवेश।
पतिव्रत्य का दे रही, हर वैश्या उपदेश।।(28)

आज समाज में फैली हुई भ्रूण हत्याओं पर भी दोहाकार की नज़र गई है, इसी विषय में डॉ. ध्रुवेन्द्र भदौरिया कहते हैं कि आज का यह वैज्ञानिक युग जो जन्म से पहले ही गर्भ में पल रहे शिशु की जाति का पता लगा लेता है, इसी के कारण आज कन्या भ्रूण का नाश भी हो रहा है जिससे निरन्तर समाज में नारीओं की जनसंख्या कम हो रही है। समाज में फैली ऐसी असंगति के कारण आधुनिक दोहाकार व्यथित है और कहता है कि-

कन्याओं का वध करे जो विकसित विज्ञान।
उससे अच्छा सौ गुना पिछडापन, अज्ञान ।।(29)

डॉ. भदौरिया स्वयं चिकित्सक हैं। अतः समाज में व्याप्त इस दूषण को उन्होंने बडी ही नज़दीकी से देखा है अतः स्वभाविक है कि सामयिक विषय वर्णन में, अभिनव प्रयोग के रुप में उनका यह दोहा श्रेष्ठ भूमिका निभाता है।

नारी को शक्ति स्वरुपा समझा गया है, जिसके सामने कभी यमराज भी झुके थे। इस प्रकार नारी की महानता की सुदीर्घ परम्परा वर्षो से चली आ रही है परन्तु उसकी महानता पर आज भी प्रश्न चिह्न लगा हुआ है। इसी प्रश्न को उठाते हुए श्री ओम वर्मा इसी समाज से पूछते हैं कि-

जिस नारी के सामने, झुके कभी यमराज।
हर पल नर के सामने, क्यों झुकती वह आज ।।(30)

इन समाज की सारी व्यवस्थाएं लड़खड़ा गयी हैं जिसमें फँस कर मानव जीवन एक प्रपंच बन गया है। जिंदगी के सारे रंग बदरंग हो गये हैं, जीवन को जीने के लिए मानव को वे सभी कर्म करने पडते हैं । जो वह स्वयं नहीं चाहता परन्तु समय की ऐसी कालिख उड़ रही है कि जिससे कोई नहीं बच सकता, ठीक उसी प्रकार, जिस तरह कुँएं में भंग घोल दी गई हो, और सारा गाँव समाज उसका पानी पिये हुए हों। आज विज्ञापन की सर्वत्र होड़ लगी हुई है ऐसी ही भावनाओं को प्रकट करते हुए श्री ब्रजकिशोर पटेल कहते हैं -

देह-प्रदर्शन के लिए-आरक्षित है मंच।
विज्ञापन की रोशनी, जीवन हुआ प्रपंच ।।
समय उछाले कालिमा, रंग हुये बदरंग।
काले सबके मुँह हुये, पडी कुएं में भंग ।।(31)

आज चारों तरफ से जलता हुआ सामाजिक वातावरण जिसमें मानव मात्र अपने लिए ही जीवित है, सबके अपने ख्याल व अपनी अलग ही मान्यताएं है। जिसके कारण समाज में व्याप्त वैचारिक असंतुलन चल रहा है ऐसे में तिथि त्योहार मात्र औपचारिक ही दिखाई देते हैं -

वो मेरा त्यौहार हो, या तेरा त्यौहार।
ना कोई उत्साह अब, ना उमंग ना प्यार ।।(32)

आज यदि कहीं आपसी प्रेम भाव है, तो वह भी स्वार्थ बस, आज चाहत की तितली उदास है क्योंकि हर फूल, हर कली के पास कृत्रिमता की गंध है। आज सम्पूर्ण मानव समाज छोटे-छोटे धर्म संप्रदायों में बँट गया है। अतः प्रत्येक मनुष्य, समाज में एक झूठी शान-बान के लिए आपस में लड़ झगड रहा है, ऐसे में सामयिक साहित्य जो भी लिखा जायेगा, उसमें सामयिक समाज का प्रतिबिम्ब अवश्य होगा, अतः दोहाकार (कवि) रामानुज त्रिपाठी बिखरते हुए समाज के लिए चिंतित हैं और कहते हैं कि-

बिखर रहा है इन दिनों, यूँ संगठित समाज।[33]
जैसे कोई छीन दे, परत-दर-परद प्याज।।
मन में शंकाएँ घुसीं, और हुआ यह हस्र।
ज्यों मच्छरदानी फटी, मच्छर घुसे सहस्त्र।।

आज जीवन की अनेक असंगतियों के कारण मावन स्वयं अपनी पहचान खो चुका है, हरपल नित नई पीड़ा मानव समाज में उजागर होकर दुःख का कारण बनती है।

भरी भीड़ में खो गई, है अपनी पहचान।
पीडां की झील में डूब गयी मुस्कान।।[34]

आज समाज को जहाँ सभ्य बनाने की बात कही जा रही है। वहीं स्वयं ऐसे भी लोग है जो समय सापेक्ष किसी भी सभ्यता को अपनाने में नहीं हिचकिचाते चाहे समाज पर उसका कोई भी असर हो, वे एक दलील देकर चुप होकर अपने कार्य में पुनः व्यस्त हो जाते हैं -

यही समय की माँग है - देकर एक दलील।
चित्रकार रचने लगा, सभी चित्र अश्लील।।[35]

आज समाज में मानव अनेक लतों में फँसा हुआ है और इसकी जिम्मेदार है व्यक्ति की मानसिकता। व्यक्ति एक दूसरे की देखा देखी एवं होड में फँसा है वह चाहकर भी मस्तिष्क से नही सोच पा रहा है और निरंतर पतन के रास्ते पर भागा जा रहा है। ऐसे ही कुछ समाज में दूषणों का भण्डार है, जिसमें से आज का दोहाकार एक ऐसे वर्ण्य विषय का वर्णन करता है जो समाज की आँखें भी खोल सकता है। दोहाकार कहता है कि शराब जैसा जहर जो धीरे धीरे व्यक्ति को ही नही, बल्कि आसपास के परिवेस को भी नष्ट कर देता है। इससे सावधान करते हुए कवि एवं दोहाकार श्री विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक' जी कहते हैं -

सुरा सुरों का पेय है, धनिकों के अनुकूल।
निर्धन पी-पी कर मरें, भुगतें अपनी भूल।।[36]

इस प्रकार हम निरंतर देखते हैं कि आज का दोहा मानव जीवन से जुडा हुआ है। उसमें वहं सब कुछ समाहित है जो समाज में चल रहा है। आज समाज में निरंतर जहाँ भौतिक वस्तुओं का मोल बढता जा रहा है। वहीं चेतन मानव का मोल घटता जा रहा है। आज हम निरंतर विश्वासों का हनन कर रहे हैं जिसके कारण मानव एक दूसरे पर विश्वास नहीं करना चाहता इसलिए आज हम देखते हैं कि मानव समाज में पशुओं पर अधिक प्रीति देखने को मिलती है, आज व्यक्ति की यह सोच बन गयी है कि मनुष्य से अधिक कुत्ता अधिक वफादार होता है। इसीलिए कवि कहता है कि-

हुए सभ्य इतने अधिक, कर से छूटा लक्ष्य।
पशुओं से अति प्रीति है, नर ही नर का भक्ष्य।।[37]

यही समाज में खोते हुए विश्वासों के कारण मनुष्य मशीनों के आधीन अधिक हुआ है। क्योंकि आज मानव से अधिक मानव को, जड़ मशीनों पर भरोसा है इसीलिए तो आज पैसों-रुपयों का जोड-घटाव करने के लिए मशीनों का ही प्रयोग अधिक होता जा रहा है। सभी झूठ और सत्य का न्याय इन्हीं मशीनों पर निर्भर हो गया है ऐसे ही अभिनव वर्ण्य को दोहे के माध्यम से बटुक जी कहते हैं कि -

चेतन नर की बात पर, आज कौन पतियाय।
जड़ मशीन करनें लगी, झूठ सत्य का न्याय।।[38]

आज समाज में जहाँ मनुष्य मात्र अपने लिए ही जी रहा है, वहीं समाज में कुछ ऐसी व्यवस्था बन गयी है कि मनुष्य आपस में नोंचा-नाची कर रहा है। आज धनिक और धनवान होता जा रहा है, और गरीब की हालत और बिगड़ती जाती है। आज शोषण का ज्वर बडी ही तेजी से समाज में व्याप्त है। बिना लागवाग-धन और व्यवहार के कोई काम नहीं बनता। शहरों में तो लोग इसकी टोपी उसके सिर और उसकी टोपी इसके सिर रखकर कैसे भी जी लेते हैं। मगर गाँव का साधारण किसान मात्र अपनी किस्मत के भरोसे काम करता है । अतः कब क्या मिले कुछ कहा नहीं जा सकता। ऐसे ही वर्ण्य में अभिव्यक्त दोहाकार का निम्न दोहा जो किसान और उसके परिवार के रहन-सहन का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता है -

जननी शिशु, दारा, बहिन, पडे सिसकते पास।
यह मरघट है या कि है, दीन कृषक का वास।।[39]

समाज में यह वर्ग ऐसा भी है कि जो धनिकों के शोषण के कारण हलधर किसान से मजदूर में परिवर्तित हो गया है। कारण बस उसे जीवन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड रहा है। अतः आज का दोहा ऐसे ही वर्ण्य को प्रस्तुत करने में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाता है जिसमें इन शोषितों की उत्पीडन स्पष्ट नज़र आती है-

खाकर सौ-सौ ठोकरें, गाली चख भरपूर।
पीकर उर का रक्त निज, जीता है मजदूर।।(40)

समाज में इसी वैसम्य के कारण मानव का मानव शत्रु बना हुआ है, मौका पाते ही सबल निर्बल को निगल जानें को तैयार रहता है। अतः मानव समाज में फैले ऐसे वैद्रूप्य को साहित्य जगत में वर्णित करके साहित्यकार अपने पथ पर निरंतर अग्रसर है। ऐसे ही वर्ण्य को प्रस्तुत करने में दोहा बहुत बड़ी भूमिका निभाता है। अतः दोहाकार बटुक जी कहते हैं-

संतति-विक्रय को विवश जीवित खाकर घास।
आजादी का हो कहाँ, निर्धन को आभास।।(41)

आज निर्बल और निर्धन को तो हमेशा सिर झुकाकर ही चलना पड़ता है। भले ही भारत आजाद हो गया हों पर आजादी का सभी को आभास नहीं होता। अपनी किस्मत से वे निरंतर लडते रहते हैं और अपनी किस्मत को खोलने के लिए निरन्तर लगे रहते हैं। ऐसे ही भावों में वर्ण्य दोहा का सृजन करते हुए डॉ. पाल भसीन कहते हैं कि यह युग नितान्त पाषाड युग है और इन पत्थरों से बिना टकरायें तुम कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते, अतः समाज में मानव को निरन्तर कोशिशें करते रहना चाहिए -

यह दर है पाषाण का, लगातार सिर फोड़।
शायद खुल जाये कभी, कर कोशिश जी तोड़।।(42)

समकालीन मानव जीवन अत्यंत ही कष्टदायी है। समाज का सम्पूर्ण परिवेश तनाव से ग्रस्त है ऐंसे में मानव जीवन बिना पतवार की नांव की भांति नदी में बहा जा रहा है और कुछ भी ज्ञात नहीं कि यह मानव कहाँ टकराये, कहाँ डूबे। सारे जीवन के मूल्य आज तार-तार हो गये है, आज मावन समाज में बढती हुई उत्पीडन के कारण दोहाकार क्षुब्ध है और वह अपने वर्ण्य में सामयिक ऐसे ही भावों का वर्णन करते हुए कहता है कि -

अब जाने किस घाट पर, डूबेगी यह नाव।
तार-तार हर मूल्य है, बढ़ते रोज़ तनाव।।(43)

इन्ही के कारण मानव समाज में निरंतर आज मानसिक बीमारियाँ बढतीं जा रहीं हैं और मानव समाज बिना पीड़ा के पीड़ा भोग रहा है। समसामयिक चेतना से संलग्न वर्ण्य को प्रस्तुत करते हुए कुमार रवीन्द्र कहते हैं -

अर्थहीन सब पल मिले और व्यथा के संग।
रेतीले ऋतुघाट पर साँसें हुईं अनंग।।(44)

हर बस्ती में आग है, फिर भी खुश हैं लोग।
आँगन उनके बच गये, कैसा बना सुयोग।।(45)

जहाँ समाज में आज हाहा-कार का शोर गुंजित है और व्यक्ति मात्र अपनी ही आवाज़ सुनकर रह जाता है उसकी आवाज को सुनने वाला कोई नहीं, इस जलती हुई बस्ती में जिनके घर जले वे दुःखी होकर रो रहे हैं और जिनके घर बच गये वे खुश हैं। सबके अपने अपने राग और अपनी अपनी ताल है। अतः समाज की इस भयानक स्थिति का वर्णन सामयिक दोहों में एक नये अभिनव प्रयोग का निर्माण करता है।

आज के ऐसे त्रासद समय में मानव सुरक्षा पर प्रश्न चिह्न लग गया है, न जाने कब क्या हो जाय और क्या स्थिति पैदा हो जाय कुछ कहा नहीं जा सकता, सुबह जब व्यक्ति काम पर निकलता है तो यह निश्चित नही रहता कि वह सही सलामत शाम को घर लौट कर आ जायेगा। ऐसे ही भावों के इर्द-गिर्द घूमती श्री ब्रजकिशोर वर्मा की कलम चिंतित है। वह भगवान से मनाती है कि-

अजब समय की त्रासदी, मन में यही मनायँ।
सही-सलामत शाम को, वापस घर आ जायँ।।(45)

समाज में फैली चारों ओर हतासा, उत्पीडन से मानव त्रस्त है। जहाँ किसी को घोर मेहनत करने के बाद भी कुछ भी प्राप्त नहीं होता, आज समाज में ईमानदारी के जितने भी रास्ते हैं उनमें चलने से महज हतासा के सिवाय कुछ भी नहीं मिलता। श्री ब्रजकिशोर बर्मा जी की दोहा सतसई (हम जंगल के फूल) का निम्न दोहा कुछ ऐसे ही वर्ण्य को प्रस्तुत करता है -

दिन-भर कूदे सिंधु में आई साँझ समीप।
मिली न लेकिन एक भी, मोती वाली सीप।।(46)

करिये धरतीपुत्र के, मंगल की कुछ बात।
मंगल पर क्या ढूंढते तुम मानव की जात।।(47)

आज मानव समाज में धन ही दुःख का कारण है जिसके पास धन सम्पत्ति है वह उसे सम्भालने में दुःखी है और जो धनहीन है वह धन कमाने में ऐसा व्यस्त है कि जीवन के सब सुखों, भावों, इच्छाओं को भूल गया है, जीवन के ऐसे ही वर्ण्य को प्रस्तुत करता हुआ 'शैदी' जी का निम्न दोहा अपने अभिनव वर्ण्य में मानव समाज के उस यथार्थ का वर्णन करता है जिसमें लालच ने सभी कर्तव्य भुला दिए -

खाली-खाली गोद है, सूनी-सूनी सेज।
धन के लालच ने दिया, दूर पिया को भेज।।(48)
तकिया गीला, सलवटें चादर पर हैं शेष।
बिस्तर पर लिखा हुआ, विरहन का संदेश।।(49)

आज समाज में वे पुराने रंग ढंग नहीं रहे जिनमें एक सुन्दर समाज होता था जिसमें बच्चे आपसी लाड़-प्यार में खेल-कूद कर शिक्षा, ज्ञान प्राप्त करते थे। आज बदलते हुए समाज में बचपन मुश्किल में ही नही पड़ा बल्कि बोझिल भी हो गया है। आज संकुचित घर-परिवार के कारण बच्चे को शिक्षा, घर में नहीं बल्कि बाल मंदिर या स्कूल में प्राप्त होती है, और यह बड़ी बड़ी मोटी किताबों में संग्रहित हैं। आज इन मोटी किताबों के कोर्स करने से शिक्षा प्राप्त होती है। अतः इन किताबों को लादकर लाना ले जाना गधा मजूरी छोटे-छोटे मासूमों के लिए कष्टदायी है। ऐसे ही वर्ण्य भाव में सिमटा जहीर कुरेसी का दोहा द्रष्टव्य है -

तीन बरस की उम्र से, चल, बच्चे, स्कूल।
भारी बस्ता लाद ले, भोला बचपन भूल।।(50)

आज अधिकांशतः समाज की स्थिति लडखडाई हुई है। देखने में तो यह समाज ऊपर से लिपा-पुता स्वच्छ मालुम होता है। परन्तु कवि की नज़र तो वहाँ तक जाती है जहाँ रवि भी नहीं जाता। अतः समाज की वास्तविक छवि कवि व दोहाकार के सृजन में प्रतिविम्बित होती है, बीमार समाज का वर्णन करते हुए दोहाकार कहता है कि-

किस-किस की चिन्ता करें किसका करें इलाज।
गली-सडी सब व्यवस्था, है बीमार समाज।।(51)

आगे डॉ. रामनिवास 'मानव' कहते हैं कि आज भी समाज में होरी का गाँव दिखाई देता है, जहाँ वे सभी क्रिया कलाप चलते हैं जिसमें भारत देश तो महान है परन्तु सच तो यही है जिस पर प्रश्न चिह्न लगा हुआ है-

स्वर्ण उगलते देश के, खान, खेत, खलिहान।
फिर भी भूँखे हैं यहाँ, क्यों मजदूर-किसान ।।(52)

''बोलो मेरे राम'' शीर्षक के अन्तर्गत लिखे डॉ. मानव के दोहे समाज में फैलीं अनेक व्यवस्थाओं का नंगा चित्र प्रस्तुत करते हैं, कहने को या दिखावे को तो लोग साथ-साथ परिवार में एक ही घर में रहते हैं परन्तु विचार वैषम्य के कारण स्थिति यह है कि -

रिश्तों में है रिक्तता, सांसों में संत्रास।
घर में भी सब भोगते, लोग यहाँ वनवास ।।(53)

सम्बन्धों के आ गये, हम ये कैसे मोड़।
रीत, प्रीत, खुश्बू गई, टूटे सब गढजोड़ ।।(54)

आज मानव जीवन में बँटवारे की ऐसी स्थिति हो गयी है कि समाज में ऐसा लगता है कि बिना बँटवारे के कोई भी खुश नहीं है। अर्थात् सबके अपने दुःख और अपनी अलग ही खुशियाँ है अब परिवार में हँसी, खुशी, उल्लास सबकुछ बँट चुका है। कोई हँसता है तो कोई रोता है। आज समय की ऐंसी मार आन पड़ी है कि-

चाहे मजबूरी कहें, या समझें दरकार।
रिश्ते बनकर रह गये, भावों का व्यापार ।।(55)
जितने बेटे-बेटियाँ रिश्ते औ सम्बंध।
सभी परस्पर हैं बंधे, स्वारथ के अनुबंध ।।

आज आपसी रिश्तों की कोई दरकार नहीं रह गयी वह ज़माना गुजर गया जब लोग पुस्तैनी घर मकान जायज़ाद में एक साथ आकर रहते थे। परन्तु अब जिसे जहाँ कहीं भी अच्छा लगता है वहीं बस जाता है। महज़ अपने स्वार्थो के कारण मानव समाज सभी कुछ भुला देता है। सचमुच दोहाकार डॉ. रामनिवास 'मानव' के यह वास्तव में मानव के पारस्परिक हित प्रेम का वास्तविक चित्रण है। आज माँ परदेश से लौटने वाले बेटे की राह देखते-देखते मर जाती है फिर भी बेटा वापस नहीं आता यह आज बहुत बडी विडम्बना है। ''बोलो मेरे राम'' शीर्षक के अंतर्गत दोहाकार के सभी दोहे 'राम' को पुकार-पुकार कर कह रहा है कि बोलो मेरे राम ऐसा क्यों है? किस लिए है। आदि अनेक सवाल सा पूछता दोहाकार जीवन की अनेक विडम्बनाओं की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार डा. मानव का हाल ही में प्रकाशाधीन दोहासंग्रह सहमी-सहमी आग में जीवन के अनेक चढ़ते उतरते क्षणों को अभिव्यक्त किया गया है।

मानव जीवन में भरे हुए इसी स्वारथ के परिपेक्ष में आचार्य रामेश्वर हरिद कहते हैं कि-

या यह सच्चा ज्ञान है या स्वारथ का जोर।
नैन द्रवित होते नहीं, अन्तस हुए कठोर।।[56]

आचार्य रामेश्वर हरिद के 'सारांश' शीर्षक से संग्रहित दोहा संग्रह में लगभग जीवन की उन नीति पूर्ण स्थिति का वर्णन है जो हमें अच्छा-बुरा कुछ न कुछ अवश्य सिखाती हैं। उनके दोहों में निश्चय ही सीख का एक दायरा छुपा हुआ है। आचार्य हरिद के दोहे सीधे सरल भावों की अभिव्यक्ति हैं। मावन जीवन में मर्यादा एक बहुत बडी लकीर है परन्तु आज इसका भी ह्रास हो रहा है। इसी परिपेक्ष में आचार्य हरिद कहते हैं कि-

मर्यादा हर क्षेत्र में मिटती जाती रोज।
गंगू तेली हो रहे, अब के राजा भोज।।
अपनी सीमा में रहें, पैदा हो न विवाद।
सीता, लक्ष्मण-रेख की, का था सभी को याद।।[57]

दोहाकार के कहने का तात्पर्य है कि यदि हम अपनी सभी मर्यादाओं का पालन करें तो जीवन में कदाचित कभी दुःख या उत्पीडन का सामना न करना पडे। आज व्यक्ति समाज में एक कार्य को ठीक से पूरा भी नहीं कर पाता है कि दूसरा काम आ टपकता है, जीवन बहुत तेज़ हो गया है। आजकी सामाजिक स्थिति का वर्णन करते हुए आचार्य हरिद लिखते हैं कि-

दीन व्यक्ति के भाग में, पीर और अपमान।
और उधर धनवान नर, मुफ्त पाय सम्मान।।[58]

आज सामाजिक देखा-देखी में प्रत्येक मनुष्य के हाव भाव व्यवहार बदल रहे हैं। ऐसे में बच्चे कहाँ पीछे रह सकते हैं । आज समाज में बच्चे घर, घरौंदे, या रेल आदि खिलौनों का खेल नहीं खेलते, वे तो बड़ों का खेल देखकर खेलते हैं। बच्चे शरीर और उम्र में तो छोटे होते हैं मगर मन मस्तिष्क से बड़ों के भी कान काटते हैं। इसी देखादेखी को लेकर बच्चों के खेल व्यवहार में आये परिवर्तन को दोहाकार वर्णित करते हुए कहता है कि-

अब बच्चे ना खेलते, घड़े खरौंदे रेल।
खेल रहे पिस्तौल बम, चोर, सिपाही, जेल।।[59]
कैसी नित्य विडम्बना, देख रहे ये नेत्र।
जिस घर रामायण रखी, बने वहाँ कुरुक्षेत्र।।[60]

समाज में आये परिवर्तन से मानव मन क्षुब्ध है जैसा कि सामयिक दोहाकारों में सभी ने यही अहसास किया है सबके अपने राग और अनुराग हैं सब अपनी ही करनी पर खुश हैं। किसी को दूसरे पर भरोसा नहीं। अतः इसी परिपेक्ष में डॉ. महेश दिवाकर भी समाज के ऐसे रुप को देखकर अभिव्यक्त करते हैं कि-

पहले मेरे गाँव में जलती होली एक।(61)
आया कैसा दौर है, घर-घर जलें अनेक॥

आज समाज में मानवता का निरन्तर ह्रास हो रहा है जिसके कारण इंसानियत रोने पर मजबूर है। इंसान खडा मात्र दर्शक बना हुआ है और इंसान स्वयं का ही शैतान रुप देख रहा है। इसी बदलती रीति से आज का दोहाकार हैरान है और अपने भावों को प्रकट करते हुए कहता है कि-

धर्म और ईमान की, टूट गई है लीक।
अब देती इंसानियत, कुछ उलटी ही सीख॥(62)

आज समाज में आधुनिकता के बढ़ते अनेक परिवर्तन होते जा रहे हैं। कहीं सोच विचार बदले हैं तो कहीं जीवन जीने के ढंग। ऐसे समय में मनुष्य मात्र अपनी सुख सुविधा का ख्याल रखकर ही कार्यशील है, पुराने मूल्यों का किसी को अब कोई बोध नहीं है। मात्र भौतिक सुख सुविधाओं में व्यक्ति का जीवन खो गया है। ऐसे में सांस्कृतिक परम्परा एवं अनुवंशिकता खोती जा रही है ऐसी स्थिति पर दोहाकार श्री हरेराम 'समीप' लिखते हैं कि-

दादाजी यह सोचकर, हो जाते गंभीर।
कौन सम्हालेगा यहाँ, पुरखों की जागीर॥(63)

बात सत्य ही है कि जागीर का वारिस मात्र अपना ही भला सोच कहीं विदेश भाग रहे हैं तो कही देश में ही किसी कोने में बस रहे हैं। पुरखों के नाम व जागीर की उन्हें कोई चिंता नहीं रही, अरे आज स्थिति यहाँ तक आ पहुंची है कि लोग अपनी जाति, गोत्र तक भूल गये हैं। आज व्यक्ति अपनी जरुरतों को पूरा करने के लिए जीवन के अनमोल पल भी गवांता जा रहा है। ऐसे ही अनुभवों का अपार सागर दोहाकार 'समीप' के निम्न दोहे मे छलकता है, जो सामयिक दोहा में एक अभिनव प्रयोग की सही परम्परा का निर्वाह भी करता है -

आँखों में छाये रहे, बँगला, गाड़ी, शान।
भूल गया मैं देखना, बच्चों की मुस्कान॥(54)

दोहाकार 'समीप' समाज में उस उत्पीडित परिवार पर भी नज़र डालते हैं जहाँ जीवन मात्र कहने को रह गया है। आज ऐसे समाज में अनेक परिवार हैं जो शराब जैसे पेय के कारण बर्बाद हो गये हैं। ऐसे में दोहाकार भी अपने भावों को कैद करके नहीं रख सकता। समाज में बेबसी के आलम में जीने वाले कुछ ऐसे भी लोग हैं जिनके आगे पीछे दोनों तरफ खाई है जो न मर सकते हैं और न ठीक से जिन्दा रह सकते हैं इसके कारणों में शराब बहुत बड़ी भूमिका निभाती है।

माँ पर, मुझ पर, बहिन पर, बरसे खूब अज़ाब।
बेबस पापा आएँ जब, पीकर रात शराब।।[65]

जब समाज का प्रत्येक व्यक्ति ही अपनी अपनी आपा धापी में लगा हुआ है तो ऐसे में कोई किसी दूसरे से क्या आशा रख सकता है। प्रत्येक व्यवहार आपस में मात्र एक दिखावा (formality) रह गया है।

तेज धुनों पर नाचते पति-पत्नी स्वच्छंद।
बाट जोहते सो गए, बच्चे घर में बंद।।[66]

समाज में आपसी सम्बंध व्यवहार मात्र स्वार्थ से बंधे हुए हैं। बिना स्वार्थ के आजकल कोई किसी की खैर तक नहीं पूछता है। आज जब बच्चों को माँ-बाप की जरुरत होती है तो माँ-बाप के पास समय नहीं होता और कल जब माँ-बाप के पास समय होता है तब बच्चों के पास समय नहीं रहता, यह समय की बड़ी भारी विडम्बना है।

दोहों में प्रासंगिक राजनीति

परिवर्तन संसार का नियम है। आज से सौ साल पहले का जो संसार था आज उसमें पर्याप्त अन्तर आ गया है अतः देशकाल की स्थितियाँ बदलीं है। समय के अनुसार जो समाज देश की माँग रहती है उसी के अनुरुप स्थितियाँ भी बदलतीं हैं और इन्हीं के साथ लेखक की लेखनी में भी पर्याप्त अन्तर आता है। कहने का तात्पर्य है कि हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में जो स्थिति थी वह आज बदल गयी है। अतः आधुनिक मानव की सोच में भी अन्तर स्वतः आ गया। इसी प्रकार समय-समय पर देश की राजनीतिक स्थितियाँ भी बदलती रहतीं है जिसका सीधा प्रभाव साहित्य पर पड़ता है।

सामयिक विषयों को लेकर दोहा छन्द में आज बहुत साहित्य लिखा गया है जिसमें अनेक विषयों का वर्णन है। आज समय के चलते राजनीतिक स्थितियों में भी पर्याप्त अन्तर आया है जिसे देश के अनेक दोहाकारों ने वर्णित किया है। आज राजनीतिक स्थिति बडी ही खराब हो गयी है। खेंचम खेंच, आपा धापी, मची हुई है राजनीति के खेल में मनुष्य दिल ईमान सब कुछ बेच चुका है। आज की राजनीतिक व्यवस्था के कारण सभी कुछ मँहगा हो गया है और सस्ता है तो मात्र इंसान, जब जी चाहा रख लिया और जी चाहा तो हटा दिया। शोषण की यह वेल इतनी बढ़ गयी है कि जिसकी नजर खेल से हटी समझो वह भी हटा इसी परिपेक्ष में श्री विश्व प्रकाश दीक्षित कहते है कि -

शोषण और विकास का है आपस में मेल।
बिन जल शोषण किये नहीं पनपती बेल।।[68]

आज देश की राजनीतिक स्थिति बहुत बिगड़ गयी है। नेता मात्र अपनी सत्ता के लिए न जाने क्या-क्या खेल खेलते हैं। गिरगिट के समान रंग बदल-बदल कर नित नये वेश में सामने आते हैं। आज राजनीति के कारण दुष्ट लोग भी वंदनीय हैं। जिन पर अनेक दोष लगे है वे भी निर्दोष बनकर समाज में खुले घूम रहे हैं। बटुक जी कहते हैं कि-

कल थे बंदी जेल में, वन्दनीय वे लोग।
रेप डकैती, खूँन के जिन पर हैं अभियोग।।[69]
रोशन हैं अँधियार में नेताओं के धाम।
रंग बदलने में निपुड, रचें फाग हर शाम।।[70]

यह तो सर्वविदित ही है कि नेता बनने के लिए किसी योग्यता या उंमर की बंदिस नहीं है। परिणामतः ऐरे गैरे, नत्थू खैरे भी नेता बनने के लिए तिरपटी चाल चलने में मशरुक हैं। सत्ता हाँसिल करने के लिए आज नेता गण साम, दाम, दण्ड, भेद और न जाने कौन कौन से अनेक तरीके अपनाकर कुर्सी पर चढ बैठते हैं और जनता पर हुकम चलाते हैं। इसी परिपेक्ष्य में दोहाकार श्री कृष्ेश्वर डींगर जी कहते हैं कि-

कुर्सी पर बौना-चढ़ा होने लगा गुमान।
कुर्सी के आकार का उसे न कुछ था ज्ञान।।[71]

आज समाज में एक अयोग्य नेता को सत्ता में लाने के लिए रक्त की नदियाँ बह जातीं हैं, और मूक शवों के बीच राजनीति की फसल दिन रात पनपती रहती है-

राजनीति करती रही भीषण नर संहार।
पहन मुखौटा शांति का रावण सा–व्यवहार।।(72)

आज देश की भ्रष्ट राजनीति के कारण सारी व्यवस्थाएं उथल पुथल हो गयीं है। आज जहाँ खादी के भण्डार में स्वदेशी खादी वस्त्र बिकने चाहिए। वहीं विदेशी वस्त्र बिक रहे हैं। कवि प्रजातंत्र और षड़यंत्र में हुए आपसी ताल मेल को लेकर भी चिंतित हैं, आज राजनीति ने समाज, अर्थनीति और साहित्य को भी अपनी घुस-पैठ से दूषित कर दिया है। आज बहरों को कुर्सियाँ बाँटीं जा रहीं हैं। गूंगों को अधिकार दिये जा रहे हैं और अंधों को दर्पण तथा लूलों को हथियार बितरित किये जा रहे हैं। समाज में पल रहे राजनीति के ऐसे घिनौने रूप को वर्णित करते हुए दोहाकार कहता है कि-

राजनीति के मंच पर कुछ भी नहीं अदृश्य।
धर्म स्थल पर देखिये, युद्ध स्थल के दृश्य।।(73)

आधुनिक दोहाकारों ने अभिनव प्रयोग के द्वारा सामयिक दोहे को सजाया है। आज जो देश समाज में राजनीति के चक्कर में चल रहा है इन दोहों में इन्हीं का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। आज धर्म स्थलों मंदिर, मस्जिद में आतंकवादी शरण ले रहे हैं। आज राजनीति में धर्म को भी घसीटा जा रहा है-

कुर्सी की खातिर करें देश धर्म नीलाम।
वोटों की बोली लगी, क्षेत्र अयोध्या धाम।।(74)

देश में बढ रहे राजनीति के घिनौने रुप के वर्णन में आज साहित्य भी घिनौना होने लगा है फिर भी कवि अपने धर्म का पालन निरन्तर किये जा रहे हैं। सत्ता, कुर्सी नेता आदि के वर्णन में दोहाकार ने अनेक शब्दों का चयन किया है। जिनमें ये नये बिम्ब व अभिनव प्रयोग सामने आते हैं। राजनीतिक स्थिति पर जितना लिखा जाय उतना कम है क्योंकि राजनीति के दल-दल की कोई थाह नहीं है।

राजनीति की कींच में कुर्सी कमल समान।
कमलग्राही बन किया तन, मन, धन कुर्बान।।(75)

देश की किसी को चिंता नहीं है। नेता स्वार्थ सिद्ध के हेतु अपने देश तक को बेचने से नहीं हिचकिचाते इसी परिपेक्ष में दोहाकार श्रीकृष्ण शर्मा कहते हैं कि-

बेच रहे हैं देश को स्वार्थ सिद्ध के हेतु।
देश–विदेशों में वही हैं विकास के सेतु।।(76)

राजनीति में देश की दशा यह है कि ''जाकी लाठी ताकी भैंस'' पढाई, अभ्यास का वहाँ कोई काम नहीं गँवार ढोर चराने वाले भी आज नेता बन जाते हैं -

दोयम दर्जा पास है मंत्री पीला लाल।
एम.ए. कर हम्माल है लेकिन हसन जमाल।।(77)

आज राजनीति में जो भी सत्ता पर आता है। निरंतर परिवर्तन की बात करता है। देश समाज के लिए बहुत कुछ करने की बात होती है। परन्तु वह मात्र गाल बजाना ही है। सारे प्लान हवा में उड जाते हैं। दोहाकार श्री माहेश्वर तिवारी सरकार द्वारा लाये जाने वाले परिवर्तन के बारे में कहते हैं कि -

परिवर्तन के नाम पर बदली क्या सरकार।
रफ्ता रफ्ता हो रहा, पूरा देश बिहार।।(78)

ऐसा सियासी राज देख कर देश की जनता अपना सिर पीटती हैं और सोचती है कि किन लोगों को देश की बाग डोर सौंप दी है। परन्तु सच तो यही है कि राजनीति में आज यदि स्वयं हरिश्चंद्र भी आ जायें तो उनका भी ईमान बदल जायेगा, और इस राजनीति की मार में पिसेगा लोकतंत्र, कहने को तो जब नेता बडे-बडे भाषण देते हैं तो ऐसा लगता है कि सारा भार इन्हीं पर हैं। ऐसे ही भावों को दोहा छन्द के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए हरे राम समीप लिखते हैं कि-

देश प्रेम, निज धर्म वो, ऐसे करें बखान।
जैसे हों इस देश की, इक लौती संतान।।(79)

नेता सत्ता रुढ़ होकर सब कुछ भूल जाता है। फिर उसे सुरा सुन्दरी ऐस आराम के सिवाय अन्य कुछ देखने, सोचने, करने का मौका ही नहीं मिलता और यदि कुछ सोचते करते भी है तो अपनी सुख सुविधा का सम्पूर्ण ख्याल करके इसी भाव को व्यक्त करते हुए समीप जी कहते हैं-

क्या होगा इस देश का, किस करवट हो ऊँट।
बहस रात भर ये चली, लगा लगाकर घूँट।।(80)

भ्रष्ट राजनीति के चलते सारा मानव समाज प्रभावित हुआ है। घर, ऑफिस, बाजार हर जगह अब बिना राजनीति के बात नहीं बनती यदि सीधी भाषा में कहें तो कूटनीति का नाम बदलकर

राजनीति हो गया है । राजनीति में में नई-नई चाले चली जाती है। इसी में मानव अनेक मुखौटे बदलता है। गिरगिट की तरह समयानुसार रंग भी बदलता रहता है। आज सही माइने में जिन्हे ये सब चालें चलना आता है वह सच्चा राजनीतिज्ञ बन सकता है। आज देश के अनेक नेता और उनके सहयोगी ऐसी चालों से अपना भला कर रहे हैं। अब तो हर जगह भलाई के लिए राजनीति का प्रयोग होता है चाहे कोई भी क्षेत्र हो राजनीति किये बिना काम नहीं बनता ।

देश भक्ति बनने लगी, राजनीति का अस्त्र।
और सियासी हो चला, आज गेरुआ वस्त्र॥
झूठ और अफवाह से सरावोर अखबार।
जहाँ मरे थे तीन सौ, बता रहे वेचार॥[81]

आज राजनीतिक उथल-पुथल में साधारण मनुष्य की कोई विसात नहीं वह निरंतर अपने जीवन के दुःखों के भवन में फँसा रहता है और राजनीति की भेंड उसके हृदय के भाव, अरमान, सब कुछ चर जाती है। इसीलिए दोहाकार श्री दिनेश शुक्ल कहते हैं कि-

आम आदमी बन गया, हरी भरी इक मेड़।
जब जी चाहा चर गयी, राजनीति की भेंड़॥[82]

राजनीति के क्षेत्र में गरीब कल्याण के लिए सरकार अनेक योजनाएं बनाती हैं परन्तु क्या उनका समुचित लाभ इन गरीबों सर्वहारा लोगों तक पहुंचता है। यह एक अभी भी प्रश्न चिह्न बना हुआ है, परन्तु पता सभी को है कि बीच में इस भ्रष्ट राजनीति के कारण सब अपना ही पेट भरने में लगे हुए हैं। इसी परिपेक्ष्य में सामयिक दोहा छंद के श्रेष्ठ दोहाकार हस्तीमल हस्ती कहते हैं कि-

मेरे हिन्दुस्तान का है फलसफा अजीब।
ज्यों-ज्यों आयी योजना, त्यों-त्यों बढ़े गरीब॥[83]

समाज में आम आदमी भी राजनीति की सत्ता में भरे हुए माल को देकर अपनी नौकरी और व्यवसाय को छोडकर राजनीति की दिशा में नेता बनने के लिए दौड रहा है। आज लोग देश की चिंता छोडकर अपना-अपना इतिहास बनाने की दिशा में प्रयत्नशील हैं जिसके लिए उन्हे भले ही किसी भी राह पर चलना पड़े पर वे नहीं हिचकिचाते क्योंकि -

क्यों कोई नौकर रहे क्यों ले तकडी-बाट।
राजनीति में जब मिलें महलों वाले ठाठ॥

हंसों को है बावड़ी औ कौवों को झील।
नये दौर के हो गये, समीकरण तब्दील ॥[84]

दोहाकार ने राजनीति के व्याल को बड़ी ही नज़दीकी से देखा है। सत्ताधीश कैसे-कैसे अपराधों, क्रिया कलापों में लिप्त हैं । परन्तु फिर भी उनका कोई नुकसान नहीं होता । सत्ता के जोर पर निर्दोश को दोषी बना दिया जाता है और स्वयं पाक, पवित्र बनकर सामने आते हैं। इसी प्रकार का वर्ण्य प्रस्तुत करते हुए जहीर कुरेसी कहते हैं कि-

औरों के सिर जड़ दिये, अपने सारे दोष।
राजनीति में इस तरह, लोग बने निर्दोश ॥[85]

सामयिक दोहों में निरन्तर आज हम देखते हैं कि प्रत्येक दोहाकार राजनीति के दल-दल को प्रस्तुत किये बिना नहीं रहा है। आज समाज में जितने भी अपराध, पाप, व्यभिचार, आदि हो रहे हैं। इन सबके पीछे राजनीति का ही हाथ होता है। चाहे कोई दुर्घटना हो आग जनी हो या कि फसाद सबके पीछे राजनीति का ही हाथ होता है। अतः राजनीति की जडें हर क्षेत्र में व्याप्त हैं। दोहाकार समय की यह मार्मिकता व उनके कारण सामान्य मनुष्य पर होने वाले असर पर केन्द्रित वर्ण्य प्रस्तुत करता है -

सूत्रधार कोई दिखे, कोई खेले खेल।
जुर्म करे कोई मगर, जाये कोई जेल ॥

जहाँ राजनीति की बात आती है तो वहाँ बाघ और बकरी भी साथ-साथ रह सकते हैं, पानी अंगारे के साथ मित्रता करता है। यह सब राजनीति के ही कारण सम्भव है क्योंकि वहाँ निश्चय ही एक दूसरे का स्वार्थ होता ही है। इस दलदल में वेश जाति को कोई अहमियत नहीं। योग्यता की यहाँ कोई दरकार नहीं। आचार्य भागवत दुबे कहते हैं कि -

बगुलों को सौपे गये अमृत के घट आज।
राज हंस की प्यास का मरुथल करें इलाज ॥[86]

राजनीति में देश की सत्ता कभी-कभी ऐसे नेताओं के हाथ में चली जाती है जो सत्ता का सही अर्थ तक नहीं समझते हैं। पर हाँ उससे प्राप्त सुख अवश्य समझते हैं । कहने का अर्थ है कि सत्ता एक सुन्दरी के समान है। इस सत्ता में इतनी मोहकता आराम है कि नेता न चाहकर भी इसे गले लगाने के लिए आतुर रहते हैं। आज सामयिक दोहाकार श्री भगवत दुबे पौराणिक बिम्ब से आधुनिक नेताओं के चरित्र पर व्यंग्य प्रधान शैली में वर्ण्य को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि-

सत्ता सुन्दरि मेनका, नेता विश्वामित्र।
राजनीति में खो गये सब आदर्शचरित्र।।(87)

समय-समय की बात के परिपेक्ष में श्री कैलाश गौतम कहते हैं कि राजनीति में सबकुछ समय के अनुसार चलता है। यदि समय विपरीत है तो घोड़ा भी गधा बन जाता है और यदि आज समय अनुकूल है तो गधा भी घोड़ा बन जाता है। इस कूटनीति में भविष्य के विषय में घोषणा करना बडा ही मुश्किल होता है। न जाने कब कौन सा पासा पलट जाय।

कट्टर पंथी हैं मगर, समय समय की बात।
पंडित जी की पाँत में मियाँ परसते भात।।(88)

राजनीति में यदि समय अनुकूल है तो आप कोई भी काम निडर होकर कर सकते हैं। फिर महज़ अपनी ही भली दिखायी देती है। देश समाज सब कुछ पीछे रह जाता है। इसी लिए गौतम जी भी कहते हैं कि -

बाबू एम.पी. हो गये, भाई थानेदार।
करते जमकर तस्करी, गोपी, रामदुलार।।(89)

एक नेता के जीवन में झूँठ, दगाखोरी निरंतर ही बनी रहती है। उसे कभी यह अहसास भी नहीं होता कि झूठ बोलना पाप है क्योंकि उसे अच्छी तरह पता है कि इसी झूठ के कारण ही उसका कारोबार, शान, सत्ता सब कुछ कायम है। इस झूठ से ही वह अपनी सात पीढ़ियों के लिए कुछ बचा पायेगा। जब दोहाकार नेता की ऐसी नीति देखता है तो अनायास ही इशारा करके कहता है कि -

झूठों की किस्मत खुली, चमका कारोबार।
हर झूठे के पास है, कुर्सी कोठी कार।।(90)

बिना किसी योग्यता के राजनीति में घुसे नेताओं के कारण आज अनेक समस्याएं खड़ी हो गयीं हैं। ये नेता जनता के प्रतिनिधि नही बल्कि गुण्डे हैं। जो कायदेसर अपना गुण्डा राज्य भी फैलाते हैं और जनता उनके हर ईशारे पर नाचती हैं और स्वयं नेता बाजीगर बनकर हुकूमत चलाते हैं। जो नेता वोट माँगने के लिए द्वार-द्वार भटक रहे दिखायी देते हैं। मगर सत्ता रुढ होने के बाद दूज के चाँद बन जाते हैं। डॉ. वेद प्रकाश पाण्डेय सामयिक दोहा छन्द के सशक्त हस्ताक्षर हैं उन्होंने इन राजनीतिज्ञ सत्ताधीशो की पोल बड़ी ही मार्मिकता से खोली है। जब कौवे हंसों को उपदेश देते हैं और कुत्ते जो हमेशा भौंकते ही रहते हैं वे आज हाथी की लगाम साधे उन्हे राह

दिखा रहे हैं। राजनीति में फैली इस आपाधापी का वर्णन करते हुए डॉ. पाण्डेय कहते हैं कि-

हंसों की मजलिस सुने, कौवों को उपदेश।
कुत्ते हाथी हाँकते, धरे महावत वेश।।(91)
नेता बाजीगर हुए, जनता बानर रींछ।
नाना नाच नचा रहे दृश्य दिखाते नीच।।(92)

देश में कहीं भी 'घोटाला' शब्द कान में पडते ही नेता और राजनीति का दृश्य ही आँखों के सामने छा जाता है। क्योंकि बिना इन सत्ताधीशों के सहयोग से घोटाला नहीं हो सकता। अतः आज का साहित्य भी ऐसे ही मामलों से भरा पड़ा है। आज देश को इस राजनीतिक आपाधापी के कारण कोई रास्ता दिखाने के लिए आगे नहीं आता, इस परिपेक्ष में दोहाकार अपने भावों को अभिनव वर्ण्य में प्रस्तुत करते हुए कहता है कि -

सभी पार्टियाँ मस्त हैं खोकर अपना वेश।
गाँधी-प्रतिमा-सा खडा, चौराहे पर देश।।(93)

आधुनिक साहित्य में जब देश के वर्णन की बात आती है तो साहित्यकार की कलम कहीं से भी शुरु हो और कहीं भी समाप्त हो। राजनीति के घिनौने रुप को प्रकट किये बिना नहीं रह सकती। आधुनिक दोहा छंद में इस विषय को प्रस्तुत करने में दोहाकारों को बड़ी ही सफलता मिली है। दोहे की स्वभाविक प्रवृत्ति के कारण कटु व्यंग्य के द्वारा रचनाकार दो टूक शब्दों में ही अपनी बात बड़ी ही मार्मिकता के साथ कह देता है। नेता यदि देश या समाज की सेवा भी करते हैं तो उसमें उनका स्वार्थ निश्चय ही रहता है। जैसे शिकारी अगर पंक्षियों (शिकार) को यदि दाने डालता है तो उसके पीछे जाल भी बिछाये रहता है। यही वृत्ति समाज सेवी नेता की भी रहती हैं। इसी संदर्भ में रचनाकार की दृष्टि सेवा के पीछे छुपे उस स्वार्थ पर भी जाती है। जो मुख्यतः नेताओं में निहित रहता है। डॉ. अनंतराम मिश्र अनन्त कहते हैं -

धन्य आप गुण धाम हैं धन्य आपके काम।(94)
सेवन किया समाज का, ले सेवा का नाम।।

इस विषय पर भी श्री व्रजकिशोर वर्मा का निम्न दोहा भी श्रेष्ठ प्रयोग है -

चारा ही दीखे उन्हे नहीं दीखता जाल।
मृग छौने जानें नहीं आखेटक की चाल।।

पहले तो स्वयं आग लगाते हैं फिर स्वयं ही आग बुझाने का नाटक करते हैं। स्वयं तगडा

माल खाकर जूठन जनता पर फेंक कर उनकी हमदर्दी भी हाँसिल कर लेते हैं। स्वयं रचनाकार चिंतित है। आज सत्ता उसी के हाथ लग जाती हैं। जो देश समाज को खोखला करने में तुला है । इसी वर्ण्य को लेकर डॉ. अनन्त का यह दोहा सटीक उदाहरण है -

डाल, पात, फल तोडना जिसका प्यारा खेल।
उस, बन्दर के हाथ दी, तू ने आज गुलेल॥[95]

और जब चुनावों के दिन आ जाते हैं और सत्ता हाथ से जाती नज़र आती हैं तो समाज में फैले राजनीति के दृश्य को प्रस्तुत करते हुए डॉ. ध्रुवेन्द्र भदौरिया लिखते हैं कि-

नेता गण दुहरा रहे, वही पुरानी बात।
ज्यों दादुर टर-टर करें, जब आये बरसात॥[96]
राजनीति का हो गया गिरगिट वाला ढंग।
जैसा हो वातावरण वैसे बदले रंग॥
कैसे होगा देश का अब बोलो उद्धार।
अन्धेपन का कर रहे अंधे ही उपचार॥

उपर्युक्त दोहों में हमें राजनीति का वास्तविक चित्र साफ नज़र आ रहा है। जहाँ कोई ईमान, भरोसा, एतबार नहीं है जो सच्चे देश भक्त होते हैं वे तो देश, समाज की सेवा में शीघ्र ही शहीद हो जाते हैं, पर जो गद्दार हैं वे मात्र अपना ही भला ताकते हैं। राजनीति में गीता कुरान की कसमों का कोई अह्म नहीं है। रोज हज़ारों झूठी कसमें खाई जातीं हैं। इस राजनीति के चलते कोई किसी को खुश नहीं देख सकता। अपने से ऊपर उठ रहे की टाँग खींच कर नीचे घसीट लिया जाता है। कहने का अर्थ ही यहाँ यह है कि सभी स्वार्थी हो गये हैं जहाँ भी अपने लिए कुछ डौल दिखाई देता है वहीं लपकते हैं। इस राजनीति में कौन स्थिति कहाँ करवट ले कुछ कहा नहीं जा सकता। श्री ब्रजकिशोर पटेल कहते हैं कि-

जाने कैसी कब बहे कैसा रहे बहाव।
राजनीति अब हो गयी, बिना पाल की नाव॥[97]

पेंड खजूर के लिए कहा गया है कि वह होता तो बहुत बड़ा है पर न ही उसनें छाया है और फल भी बहुत दूर लगते हैं। इसी परिपेक्ष्य में यह विम्ब आज के नेताओं पर केन्द्रित करते हुए दोहाकार श्री दिनेश रस्तोगी कहते हैं कि आज कल के नेता खजूर पेड़ के समान हो गये हैं-

नेता ऐसे आजकल, जैसे पेड़ खजूर ।
पंथिन को छाया नही फल लागे अति दूर ॥[98]

दोहाकार कहता है कि वोट गिनने बाँटने छाटने का जो मंथन हुआ तो उसमें जीत-जीत कर ऐसी हस्तियाँ सामने आती हैं जिन पर अनेक अभियोग लगे हुए हैं। जो देश को बर्बाद कर देना चाहते हैं, तथा जिन्होने समाज में अव्यवस्थाएँ फैला रखी हैं। इसी वोट मंथन, चुनाव आदि के दृश्य को सामने रखकर तथा पौराणिक विम्ब लेकर दोहाकार कहता है -

वोटर–मंथन जब हुआ, निकले रत्न अमोल।
तस्कर, कातिल माफिया, शातिर, गोलमटोल ॥[99]

देश की बढती हुई अवदशा में राजनीति ही सबसे बड़ी जिम्मेदार है। इसी राजनीति के कारण समाज में घर के घर तबाह हो गये हैं। सच्चे अच्छे लोग झूठे और बुरे बन गये हैं। दिन रात भय का वातावरण इसी के कारण फैल रहा है। आज हम देश समाज में जाति धर्म को लेकर जो हाहाकार का शोर सुन रहे हैं । इसके पीछे भी राजनीति ही काम करती है। मानव मानव का शत्रु बन गया है और ये मात्र इसी राजनीति के कारण, चाहे घर हो या दफ्तर मंदिर हो या मस्जिद या हो बाजार हर जगह राजनीति के ही रुप में कूटनीति व्याप्त है। जिसमें हर व्यक्ति अपना ही भला चाहता है फिर चाहे भले ही पूरा देश भाड़ में जाय। कुछ ऐसे ही भावनाओं को दोहाकार रामानुज त्रिपाठी व्यक्त करते हुए कहते हैं कि-

दिन–दिन बढ़ता जा रहा जाति धर्म का द्वेष।
मन मुटाव की आग में आज जल रहा देश ॥[100]

उपर्युक्त भावों का तोड़ बताते हुए श्री शिवशरण दुबे कहते हैं कि-

नेता रखते यदि कहीं सदाचार का मान।
होता हिन्दुस्तान यह सचमुच स्वर्ग समान ॥[101]

परन्तु रचनाकार का यह भाव स्वप्न बनकर ही रह गया है। लोकतंत्र को अनेक घाव लग रहे हैं। आज चुनाव में अधिकांश किसी भी पार्टी को पूर्ण बहुमत नहीं मिलता है मगर उल्टी सीधी राजनीति के कारण जोड-गाँठ कर सरकार तैयार हो जाती है। फिर उसमें सब अपना-अपना भला चाहने लगते हैं। इसी बीच देश के काम, सुधार, उन्नति के सब दायरे धरे के धरे ही रहते हैं। उन्हें निपटाने का मौका ही नही मिलता कारण कि पूरा समय तो कुर्सी को बचाने में निकल जाता है। अतः लोक तंत्र की स्थिति बड़ी ही दयनीय हो गयी है।

आधा देश भूख से तड़प रहा है। सारी व्यवस्थाएं त्रस्त हैं, उन्नति के कार्यक्रम बनते हैं, वे भी मात्र कागज़ पर ही बने रह जाते हैं और जनता की क्या स्थिति होती है। ऐसा क्यों है, इसी असंगति का वर्णन करते हुए श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' जी कहते हैं कि-

प्रजा तडपती भूख से, भोज उडायें भूप।
तृषित करे क्या? जब स्वयं, जल पी जाये कूप ॥(102)

आज यदि सौ कौरव में कुछ पाण्डव हैं भी तो उनकी चलती नहीं है। कारण की जब शासन तंत्र ही अंधा होगा तो अंधे ही जन्मेंगे इसीलिए एक युधिष्ठिर हर कहीं धर्म की स्थापना नहीं कर सकता। दोहाकार प्राचीन संदर्भ लेकर आज के विषय में उसका संयोग करके एक अभिनव प्रयोग हमारे सामने लाता है-

कहाँ युधिष्ठिर की चले? अर्जुन कहाँ स्वतंत्र।
दुर्योधन ही जन्मता, अंधा शासन तंत्र ॥(103)

आज सारी देश भक्ति राजनीति की कींच में फँसकर रह गयी है जिसमें सभी आचरण बिखर गये है कोई साफ सुथरा भी यदि आता है तो बिना दाग लगे नहीं रह पाता। राजनीति देखने में तो ऊपर से साफ सुथरी लगती है । नेता गण भी साफ सुथरे सफेद वस्त्र धारण करते हैं परन्तु वास्तविकता को प्रकट करते हुए महेश दिवाकर लिखते हैं कि -

गणिका का कोठा हुआ राजनीति का मंच।
बाहर से सुन्दर लगे, अन्दर भरा प्रपंच ॥(104)

जन सेवा के नाम पर राजनीति में सेवक स्वयं की ही सेवा करते हैं। दिखावे के लिए दिखावा दिखाकर सब माल चाँऊँ कर जाते हैं। परन्तु दोहाकार डॉ. विष्णु विराट भले ही लोकभाषा में बात कहते हैं पर कहते सोलह आने सत्य, ऐसा ही वर्ण्य प्रस्तुत है -

तीन दिये तेरह गिने, लिखे तिरासी नाम।
बड़े जोर सौं है रहे, राहत काम तमाम ॥(105)

दोहों का नैतिक सरोकार

सामयिक दोहा मानव जीवन से जुडा हुआ है। इसमें मनुज की दिनचर्या जीवन में आने वाले उतार चढाव हैं। जब इन दोहों में नैतिकता की बात आती हैं तो विद्वानों का सीधा ध्यान

रहीम पर चला जाता है क्योंकि जो नैतिकता रहीम के दोहों में है। वह अब के दोहों में एक नये कलेवर के साथ सामने आयी हैं। क्योंकि समयानुसार वर्ण्य विषय में भी पर्याप्त अन्तर भी आया है और साथ ही साथ मानव मन के विचार भी बदल गये हैं। अतः आज की नैकित समस्या भी मानव जीवन के परिपेक्ष्य में ही है परन्तु वर्ण्य में विम्ब व प्रतीक काफी बदल गये हैं।

जीवन में मानव अनेक प्रकार की कठिनाईयों का सामना करता है। कभी-कभी इन कठिनाइयों का सामना मनुष्य को न चाहते हुए भी करना पडता है क्योंकि जीवन की कुछ परिस्थितियाँ ही ऐसी आ जाती हैं कि चुपचाप सब कुछ सहना पड़ता है। सब कुछ जानबूझ कर सहन करना पडता है। क्योंकि मानव समझता है कि सब कर्मो का ही फल है यदि बबूल बोई है तो आम कहाँ मिलनेवाला है। इसी जीवन की रकझक में झूलते पलों का वर्णन करते हुए हरे राम 'समीप' कहते हैं कि-

अपने इस दुर्भाग्य में था मेरा भी दोष।
सभी समझता मैं रहा, मगर रहा खामोश॥(106)
यारो मत खेलो यहाँ ये जज्बाती खेल।
देख घास के पास ही, है मिट्टी का तेल॥(107)

मनुष्य में जब तक नैतिकता है भले बुरे की पहचान है। तब तक उसे कोई पछाड नहीं सकता। वह जीवन के सद्कर्मो की ओर निरंतर अग्रसर होता रहता है। सामयिक दोहों में नैतिक ज्ञान को सामने रखने के साथ-साथ दोहाकार उसके परिणामों की ओर भी संकेत करता है। जीवन में निरंतर सोच विचार कर ही कदम बढ़ाना चाहिए नहीं तो कभी कभी ऐसा भी होता है कि -

उनकी मुस्कानें कहीं दे न जाएं चोट।
शूल हमें अक्सर मिले हैं फूलों की ओट॥(108)

आज का दोहाकार दोहों के माध्यम से नैतिक ज्ञान का प्रचार प्रसार भी करता है क्योंकि बिना इस अनुभव के प्राप्त किये एक सामान्य मानव ठोकर ही खाता है। इसी लिए 'समीप' कहते हैं-

घर की मुक्ति के लिए, दरवाजे को तोड़।
बहरे सोये हों जहाँ दस्तक देना छोड़॥(109)
क्यों रे दुखिया ! क्या तुझे इतनी नहीं तमीज़।
मुखिया के घर गया, पहने नयी कमीज़॥(110)

मनुष्य के जीवन में प्रतिपल नैतिकता ही कार्य करती है। कहीं अच्छा बुरा होना न होना

सभी मनुष्य की नैतिकता पर निर्भर है। जीवन में कामनाएँ मरती नहीं हैं वे निरंतर जीवन के साथ जुडी रहती हैं। जैसे राख के ढेर में आग की चिंगारी छुपी रहती है और ईधन पाते ही भडभडाकर जलने लगती है। इसलिए जीवन में कोई निश्चित पक्ष अवश्य रहना चाहिए। 'समीप' जी कहते हैं कि जीवन में जो जैसा भी मुझे मिला मैं अपने आपको उसी के समान बनाकर उसके साथ मिलता चला गया। ऐसी सीख को अपनाकर सम्भवता सुख ही मिलता है। सभी एकाकार हो जाते हैं इसी भाव में बंधा 'हरेराम समीप' जी का यह दोहा द्रष्टव्य हैं -

जो जैसा जब भी मिला लिया उसी को संग।
यारो मेरे प्यार का पानी जैसा रंग।।(111)
अपना कर तो देखिए, प्रेम-दिव्य-हथियार।
पत्थर को भी काट दे, जल की मोटी धार।।

जीवन में आनेवाली अनेक असंगतियों के कारण मानव के कष्ट है। वह जो जैसा समाज में देखता है वैसा ही व्यवहार करना चाहता है क्योंकि लोहे को लोहा ही काटता है और ज़हर का इलाज ही ज़हर है। अतः दोहाकार इस वर्ण्य को प्रस्तुत करते हुए लिखता है कि-

देखा देखी और की, रोपा द्वार बबूल।
मै क्या करता शूल का है उपाय ही शूल।।(112)

श्री विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक' आगे कहते हैं कि-

सीधा बेशक धनुष पर, है संहारक बान्।
सर्प विषैला ही रहे भले करे पयपान।।(113)

सामयिक दोहों में सीखने सिखाने की अपेक्षा दोहाकारों ने अपने भावों की ही अभिव्यक्ति की है। धनुष का बाण भले ही सीधा हो पर उसमें सीधे गुण नहीं होते वह जब निशाने पर लगता है तो सबकुछ नष्ट कर देता है। वैसे ही विषैला सर्प भले ही अमृत पी ले वस्तु उसके गुणो में कुछ भी बदलाव नहीं आता है उसके ज़हन मे घुसा जहर नष्ट नहीं होता। जीवन में दोहाकार संकेत देकर कह रहा है कि हमेशा बाहरी रुप देखकर ही व्यवहार नहीं करना चाहिए। गुणों को देखना भी आवश्यक है। 'बटुक' अपने जीवन मे अनेक अनुभवों को समेटे हुए हैं इसी के परिपेक्ष में उनमें अनेक नीतियाँ हैं। जीवन को साहित्यकार बड़ी ही नजदीक से देखता है। समाज में कोई कितना भी ऊँचा क्यों न उठ जाय पर उसे अंत में इसी जमीन को चाटना ही पडता है -

पंछी ! जितनी भर सके, भर ले भले उड़ान।
निकलेंगे इस देह से इसी धरा पर प्राण॥

दोहाकार अनेक नये सामयिक वर्ण्य विम्बों को प्रस्तुत कर सामयिक दोहों का सृजन करता है व अपने अनुभवों से विभिन्न विषय पर सटीक रचना करके समाज के सामने रखता है।

बैठ शिखर पर याद रख आएगा वह काल।
पीले पत्ते की तरह, छोडेगा जब डाल॥[114]

श्री बटुक जी जब कोई नैतिकता की बात कहते हैं तो ऐसा लगता है कि मानो वास्तव में यह उनके जीवन का अनुभवित सत्य है-

पुलिस पतुरिया, पातकी, नेता, नमक हराम।
हाथ जोड़कर दूर से इनको करो प्रणाम॥[115]

दोहाकार कहता है संसार को जीतने से पहले स्वयं को जीतना आवश्यक है क्योंकि जो स्वयं अपनी ही नज़र में गिरा है वह दूसरों की नजर में कैसे उठ सकता है। दूसरे के बारे में यदि कुछ जानना है तो पहले स्वयं अनपे बारे में जानों इसी विषय को लेकर नव्य विम्ब प्रस्तुत कर दोहाकार कहता है कि -

तभी और के सिन्धु की तुम्हे मिलेगी थाह।
अपने जीवन की नदी पहले लो अवगाह॥[116]
दर्पण को मत दोष दे, दिखता रूप-कुरूप।
तन तेरा इसमें दिखे, मन के ही अनुरुप॥

मानव जीवन में दुःख-सुख आते हैं वे बिना बताए ही आते हैं। किसी के आने की आवाज तक नहीं आती जैसे पुराने कहावतों में कहा गया है कि होनी अनहोनी नहीं बन सकती। जो होना है वह होता है। परन्तु डॉ. पाल भसीन कहते हैं कि यदि दुःख के आने का समाचार मिल जाय तो दुःख काफी कम भी हो सकता है। उसके अग्र उपाय भी सोचे जा सकते हैं, जीवन में यदि ऐसा कुछ हो जाय तो जीवन सरल सुखमय बन सकता है, पर यहाँ मात्र प्रश्न चिह्न ही लगा हुआ है। और दोहाकार कहता है -

ये तो जो है सो सही, यही पुरातन लीक।
आँधी के पग घूँघरू बाँध सके तो ठीक॥[117]

श्री जहीर कुरेसी सामयिक दोहा छन्द में विशेष उल्लेखनीय हैं। सामयिक दोहों में नैतिक विषय पर उन्होंने बड़े ही गहरे भावों को प्रकट किया है। वे बताते हैं कि ज्ञानी ध्यानी ने यही कहा है कि जहाँ गहरी तपन होती है वही मानसून बनता है और बरसात होकर सारा आलम हरा हो जाता है। साथ ही जीवन में सफलता की एक चाबी भी उनके पास है। सीधी साधी भाषा व भावों में व्यक्त करते हुए वे कहते हैं कि -

जिसको होना हो सफल, बन जाये जल धार।
बर्तन के अनुरुप ही करे ग्रहण आकार।।(118)

कहने का तात्पर्य है कि यदि जीवन में असंगति ही न रहे तो काफी कुछ दुख कम हो सकते हैं। साहित्य में दोहाकारों ने अपने अपने अनुभवों के अनुसार नीति विषयक फलसफे प्रस्तुत किये हैं। जीवन में सफलता की चाबी, सही क्या है, क्या कैसा होना चाहिए आदि अनेक जीवन से जुड़े सवालों का जवाब हमें कुछ-कुछ ऐसे साहित्य से प्राप्त हो जाता है। जो जीवन में गतिमान हैं अपने कार्य में पूरी लगन के साथ लगा है इसे समय की थपेड़ों का कोई ड़र नहीं है। जैसे गतिमान जल की धार को कोई चाकू छुरी नही काट सकती वैसे ही अपनी मंज़िल की ओर बढ रहे दृढ संकल्पी व्यक्ति का कोई कुछ नहीं बिगाड सकता। श्री जहीर कुरेसी जी के जीवन के प्रति ये भाव निश्चय ही सफलता का सही मार्ग दिखाते हैं -

कोई चाकू या छुरी या कोई तलवार।
काट न पायी आज तक बहते जल की धार।।(119)

भारत की आज़ादी के बाद समाज में अनेक उतार चढावों से मनुष्य गुजरा है और प्रत्येक व्यक्ति अपनी वृद्धि एवं कार्यकौशल के अनुसार जिया है। इन्हीं में जो सत् पुरुष है वे हमेशा परोपकार की भावना से जीते हैं। उनमें जो गुण हैं वे उन्हीं के अनुसार ही सबसे व्यवहार करते हैं। श्री कृष्णेश्वर डींगर मेंहदी और चंदन का उदाहरण देकर कहते हैं कि-

मेंहदी कब-कब पूछती किसी हाथ का धर्म।
चन्दन कब कब बाँचता किसी माथ का मर्म।।(120)

ये दोनों तो अपने गुणधर्म के अनुसार ही व्यवहार करते हैं जैसे दीपक का काम स्वयं जलना है दूसरों को प्रकाश देना है, राह दिखाना है जहाँ तक दीप की दृष्टि जाती है। वहाँ तक उजास और उत्साह रहता है, सब जागते खेलते दिखाई देते हैं। श्रीकृष्ण शर्मा अपने अनुभव संसार से प्रस्तुत वर्ण्य को इसी संदर्भ में प्रस्तुत करके जीवन के अर्थ को सही राह दिखाते हैं-

तम दीपक के पाँव के नीचे रहा कराह।
दृष्टि जहाँ तक दीप की, है उजास उत्साह।।(121)

श्री महेश्वर तिवारी अपने दोहों को जीवन की नैतिक परम्परा के शब्दों में बाँधते हैं। वे देखते हैं कि पूरा विश्व एक बाज़ार जैसा हो गया है और नगर, गाँव जिसमें बड़ी, छोटी मण्डी बन गये हैं। जहाँ सब कुछ मिलता है। आज हमारे देश में विदेशी भी आकर अपनी पसंद की वस्तु खरीद लेते हैं। कहने का मतलब है कि आज धन ही इस दुनियाँ पर राज्य कर रहा है। आज अमीर हो या गरीब मौके का फायदा सभी उठाना जानते हैं। नैतिकता तो खत्म ही हो गयी है। आज कौन कहाँ कैसा है यह बताना मुश्किल है। श्री महेश्वर तिवारी जी कहते हैं -

सबके घर जब काँच के यह कैसा संयोग।
हाथों में पत्थर लिए घूम रहे हैं लोग।।(122)

सर्वथा अच्छाई का फल अच्छा ही होता है और बुराई का बुरा। आज जलते हुए समाज सभी को सोच विचार कर आगे बढना चाहिए। जीवन में सभी की कुछ न कुछ मजबूरियाँ अवश्य होती हैं। कुछ कर्तव्य होते हैं तथा कुछ आपसी व्यवहार भी इसलिए यदि सब अपने को अच्छा बना लें तो संसार में कोई बुरा ही नहीं रहेगा। अतः दोहाकार समाज को संमार्ग दिखाकर अपना कर्तव्य निभा रहा है। जीवन में अनेक फिलोसोफीयाँ होती हैं। यदि मनुष्य स्वयं चाहे तो भी दुःख नहीं आ सकता, पर ही इसके लिए उसे विशेष प्रयोजन बनाकर बढ़ना होगा। जीवन में सुख सुविधाएँ साधन जितने ही कम होंगे, मन पर उतना ही तनाव कम होगा। अतः श्री भगवत दुबे आधुनिक मानव को सुखमय जीवन की एक सच्ची राह दिखाते हैं -

जिस सुख सुविधा से रहे मन पर बना तनाव।
उसे त्याग स्वीकारिये गरिमा पूर्ण अभाव।।(123)

दोहाकार कहता है, बाहरी दिखावे मात्र से ही अपनी पहचान नहीं बनायी जा सकती, हर चीज का अपना एक मोल होता है। फिर चाले भले ही वह कहीं भी रखी हो। अपने असली रुप में वह अपना असली मूल्य प्रकट ही कर देती है। इस संसार में गुण ही सर्वश्रेष्ठ है। अच्छे गुणों का हमेशा मान एवं मूल्य बढता ही है, राख भले ही आसमान में उड कर आय उसे मिट्टी में ही मिल जाना पड़ता है। जीवन मे श्रेष्ठ मार्ग पर चलने के लिए दोहाकार अनेकं उदाहरणों से समझाता है, जिससे हर व्यक्ति अपना भाव व मूल्य बढा सकता है। दोहाकार आचार्य दुबे उपदेशात्मक रुप में कहते हैं कि -

कीचड़ में मोती गिरे घटे न फिर भी साख।
व्योम चूम आये भले गिरती नीचे राख।।
पुष्प, गन्ध, फल, छाँव तक रहे न जिनके पास।
पर विनम्र है इस लिए पूजा पाता बाँस।।(124)

आधुनिक मानव के जीवन में हर तरफ से चलने वाली बयार के कारण कुछ भी सोच समझ पाना मुश्किल हो गया है। तरह तरह का समय हमारे सामने आकर अनेक तालों पर नचा रहा है। आपाधापी भरे जीवन में दिल किसी कोने में बँध कर रह गया है। जिसके कारण मानवता का पूर्ण ओज दब गया है। इसी लिए आधुनिक जीवन शैली को बड़ी नजदीकी से देखकर डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय एक नये वर्ण्य को प्रस्तुत कर सही राह दिखाते हुए कहते हैं -

मन से ही सब कुछ सधे तन तो साधन मात्र।
मन न सधे तो समझिये, इसको टूटा पात्र।।(125)

मानव जीवन में सीखने की कोई उम्र नहीं होती। मानव जन्म से मरण तक कुछ न कुछ सीखता ही रहता है और सुख-दुःख सिक्के के दो पहलु हैं। डॉ. उर्मिलेश बाँसुरी का उदाहरण देते हुए बताते हैं कि उसमें अनेक छेद होते हुए भी वह कितने सुखमयी संगीत से बजकर सारे संसार को प्रसन्न कर देती है। अर्थात अनेक छेदों का दुःख स्वयं सहकर जहाँन को सुखमय करती है। पर मनुष्य पर थोडा दुःख आते ही वह दूसरों को भी हानि पहंचाने की सोचता है। कुछ ऐसे ही भावों के साथ जीवन क़ी व्यवहारिक रीति की ओर ईशारा इंगित कर डॉ. उर्मिलेश कहते हैं कि -

जख्म मिले तो क्या हुआ क्यों पड़ गया सफेद।
देख सुरीली बाँसुरी, उसमें कितने छेद।।
आगे पीछे का न कर, मन में कभी मलाल।
जितना जिसका रास्ता, उतनी उसकी चाल।।(126)

पुरातन परंपरित नीति के अनुसार मानव भविष्य उसके कर्मों पर आधारित होता है। अब वे दिन गये जब ''होनी अनहोनी नहीं होनी हो सो होय'' वाली बात का ज़माना गुजर गया है। आज आधुनिक समय जन्म कुंडली की अपेक्षा कर्म कुंडली पर निर्भर है। अर्थात जैसा करेगा वैसा भरेगा वाली बात सच हो रही है। कर्मो से जन्म कुंडली का लेख बदला जा सकता है। अतः दोहाकार संदेश जो स्वयं एक साधक हैं। वे संसार को आधुनिक कुदरत की नीति बताते हुए कहते हैं कि-

ऐ मेरे मन क्यों भला, रहा भाग्य को जाँच।
जन्म कुण्डली छोडकर, कर्म कुण्डली बाँच।।[127]

इसी परिपेक्ष में डॉ. अनंत राम मिश्र ने भी कहा है कि यदि जीवन में भाग्य लोहा है तो कर्म प्रज्वलित आग है। इसी कर्म की आग से लोहा रुपी भाग्य को किसी भी आकार में ढाला जा सकता है -

ठोक-पीट, इसको तपा, झुका न धीरज त्याग।
मित्र! भाग्य यदि लौह तो कर्म, प्रज्वलित आग।।[128]

यदि जीवन में धीरज, संयम, त्याग का भाव रहता है तो सब कार्य आसान हो जाते हैं। जोश में इन भावों के त्याग होने से दुःखों का आंना सम्भव हो जाता है। अतः 'अनंत' परम्परित सटीक उदाहरण के द्वारा संसार की सर्वश्रेष्ठ नीति की ओर ईशारा करते हुए समझाते हैं कि धीरज और वास्तविक ज्ञान जीवन अति आवश्यक है -

हैं अक्सर खोते रहे, सिंह जोश में होश।
और सफल होते रहे षडयन्त्री खरगोश।।[129]
क्रोध सदा निज साथ यों लाता आँधी एक।
गिर गिर पडते हैं विवश, जिसमें विटप-विवेक।।

नीति की बात करते आज के दोहों में दोहाकार ने मानव समाज की कुशल क्षेम को ही केन्द्र में रखकर अपने भावों को अभिव्यक्ति की हैं। आज के युग में समाज में बड़ी बड़ी बातें करना भी एक फैशन हो गया है। जो जितना वाचाल है उसे उतना ही विद्वान समझा जाता है। चाहे मार्केट में एजन्ट हो या कोई सेल्स परसन सभी बातों में उल्लू सीधा कर लेते हैं और कम बोलने वाले को भोंदू कह दिया जाता है। मगर हमारी भारतीय संस्कृति में तो यही कहावत रही है कि खाली घड़ा बजता है। पर पूरा भरा घड़ा आवाज विहीन रहता है इसी विम्ब को सामने रखकर श्री ध्रुवेन्द्र भदौरिया भी समाज की ओर कुछ इसी परिपेक्ष में इशारा करते हैं -

बढ़ा चढ़ा कर बोलना सिद्ध करे अभियान।
वाणी के वैराग्य से पण्डित की पहचान।।[130]

दोहाकार अभिमानी और ज्ञानी दोनों के लक्षण यहाँ प्रकट करता है। दोनों की पहचान समय आने पर ही होती है। जैसे सच्चे मित्र की पहचान समय आने पर होती है, कोई कितनी भी बड़ी बड़ी बाते करके, हाथ मिलाकर सगा बन जाय पर सही समय के आने पर प्रश्न चिह्न ही लगा

रहता है। जैसे श्री रामानुज त्रिपाठी सृष्टि से एक अभिनव बिम्ब लेकर बताते हैं कि -

हाथ मिलाकर राहु से चाँद उठा है झूम।
आएगी तिथि पूर्णिमा तब होगा मालूम।।[131]

अतः किसी की नैतिकता की पहचान समय आने पर ही जाँची जा सकती हैं। अतः आज का दोहाकार नेता, नाहर, नाग से दूर ही रहने की प्रेरणा देता है। क्योंकि इनके चरित्र का कुछ निश्चित आयाम नहीं होता इसी लिए चरित्र की परख अति आवश्यक है।

मानव अपने जीवन में अनेक अनुभवों को छिपाये हुए है। यदि कोई शान्त और नम्र है। तो उसमें उसकी कायरता नहीं समझनी चाहिए। दोहाकार श्री रामेश्वर हरिद ने अपने जीवन के अनेक अनुभवों को दोहा छन्द में निरुपित किया है। नीति विषयक उनके दोहों में मुख्यतः मानव जीवन से सम्बंधित ही फलसफे प्रस्तुत हुए हैं जैसे कि -

नज़र झुकी तो नम्रता नज़र उठी अभिमान।
नज़र चुराना है बुरा, दोषी की पहचान।।[132]
यदि कोई कुछ न कहे, मत समझो कमजोर।
सहन शक्ति है, किसी में कोई मचाये शोर।
लगे बदन पर चोट तो कुछ दिन में भर जाय।
घाव आत्मा पर लगे, उसको कौन मिटाय।।

इसी परिप्रेक्ष्य में श्री ब्रजकिशोर वर्मा ''शैदी'' कहते हैं कि जीवन में आत्म संयम का बड़ा ही महत्व है। इसी गुण के कारण व्यक्ति सुख को प्राप्त करता है, जीवन मधुर बनता है।

आत्म संयमी व्यक्ति का जीवन जैसे ढोल।
कसा हुआ जितना रहे उतने मीठे बोल।।[133]

समाज में फैली भिन्नताओं को दोहाकार शैदी जी एक ही सूत्र में बँधे होने का बोध कराते हैं। जीवन में सब कुछ भिन्न भिन्न ही दिखाई देता है। सारे मनुष्य, जीव एक ही शक्ति के अलग अलग रुप हैं। आंतरिक ढांचा, सभी का एक समान है इसी विषय को उदाहरण के द्वारा समझाते हुए दोहाकार कहता है कि-

एक शक्ति के रूप है जीव सभी सर्वत्र।
बने रुई से ही मगर भिन्न लगे सब वस्त्र।।[134]

समस्त मानव समाज को एकता के सूत्र में बाँधने वाला यह दोहा वास्तव में अंधेरे में रोशनी की किरण है । देखने में पढने में भले ही यह दोहा सरल लगता है। पर जीवन में बहुत बड़ी शीख़ सुझाता है।

नम्रता एवं झुकाव में भी श्रेष्ठ गुण होते हैं। झुकने का अर्थ कमजोरी ही नहीं है। वास्तव में दोहाकार ने सामयिक सोच प्रस्तुत करते हुए बड़ा ही सटीक दोहा के माध्यम से सावधान भी किया है और साथ ही एक नयी कला का संचार भी किया है। झुकाव जीवन में हमेशा फायदेमंद होता है। निम्न दोहे में डॉ. महेश दिवाकर यही अभिनव वर्ण्य को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि-

जितना ही झुकते अधिक, चीता, चोर, कमान।
उतना गहरा लक्ष्य पर, करते हैं संधान।।[135]
झुकते हैं गुणवान ही औ फलवाले वृक्ष।
दुष्ट कभी झुकते नहीं, झुकें न सूखे वृक्ष।।

वास्तव ही दोहाकार ने सत्य कहा है। जो आज इन दोहों के परिपेक्ष में साथ चलती परम्परा प्रतीत होती है। आज का दोहा अपने नये उपमानों, बिम्बों से सजा संवरा है। परम्परा में भी इसी लघुता, नम्रता, के विषय में कहा गया है कि -

लघुता से प्रभुता मिलै प्रभुता से प्रभु दूर।
चींटी ले शक्कर चली हाथी के सिर धूल।।[136]

आज की नैतिकता के बारे में डॉ. रामनिवास मानव कहते हैं कि -

करनी से कथनी अलग बता रहे हालात।
फैशन बनकर रह गई, नैतिकता की बात।।[137]
नैतिकता नंगी हुई बनी पाप की टेक।
लक्ष्मण रेखा अब यहाँ बाकी बची न एक।।

दोहा छन्द में श्रृंगार की अभिनवता

हिन्दी साहित्य में दोहा छन्द का प्रचलन बहुत पुराना हैं। हिन्दी की अनेक लोक भाषाओं में दोहा छंद की रचनाएं हो चुकी हैं। प्रमुख रुप से दोहा छन्द में श्रृंगार का जो मार्मिक वर्णन हुआ है वह अपने आप में एक मील का पत्थर है जिसे मिटाना सम्भव नहीं। परन्तु देशकाल एवं वातावरण

के अनुसार वर्ण्य में पर्याप्त अन्तर आता है। मध्यकालीन दोहों में हिन्दी की अनेक लोकभाषाओं का योगदान मिलता है जिसमें तत्कालीन दोहाकारों की शृंगारिक दृष्टि का पता चलता है। समय सापेक्ष सब कुछ बदलता है। अतः आधुनिक खड़ी बोली दोहों में मध्यकालीन दोहाकारों जैसी निरुपण की भावना तो नहीं दिखाई देती, पर आज का सामयिक दोहा एक् नये विम्ब प्रयोग व नई सोच के साथ सामने आया है। आज समाज में जिस प्रकार का शृंगार प्रचलित है उसी का निरुपण इन खड़ी बोली के दोहों में मिलता है। सामयिक दोहा मानव जीवन के चारों ओर फैले वर्णन का साकार रुप है। जिसमें एक आम आदमी से लेकर महानता के शिखर को, छूनेवाले भावों की अभिव्यक्ति हुई है। सामयिक दोहों में शृंगार के वर्णन मात्र, रुप वर्णन नायक-नायिका भेद ही नहीं है और न ही नख-शिख वर्णन है। परन्तु समस्त प्रकृति, मानव, समाज, परिवेश का वर्णन मिलता है जो मानव जीवन के साथ जुडा हुआ है। प्रत्येक मानव की अपनी निजी अनुभूतियाँ होती हैं। दोहाकार 'बटुक' जी मित्र के सच्चे स्वरूप व उससे होने वाले जीवन में सुखद अनुभव का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं, जिस प्रकार सर्दी में गर्मीली धूप सुख, आहलाद प्रदान करती हैं वैसे ही एक सच्चे मित्र का सहयोग जीवन में रहता है -

अच्छा लगता है तेरा आना मित्र स्वरूप।
सर्द हवा के दौर में ज्यों गर्मीली धूप।।

सामयिक दोहों में जो शृंगारिकता है वह सुख से दुःख की ओर भी ले जाती है और दुःख से सुख की ओर भी इसी के संदर्भ में डॉ. पाल भसीन प्रेम के ऐसे भाव को प्रस्तुत करते हैं। जिसमें कर्तव्य, निष्ठा और प्रेम के प्रति भी झुकाव दिखाई देता है। सब संसार की सुधि लेनेवाले अर्थात अपने मूल कर्तव्य का पालन करते हुए अपने प्रिय पात्र को इंतजार कराते हुए ईद के चाँद बने हैं और प्रीतम से नायिका सिकायत का भाव लिए हुए कहती है कि-

चाँद ईद के से हुए वे उत्पल-दल पाँव।
जग की सुधि लेते फिरे, पर भूले यह गाँव।।(138)

आज के आधुनिक प्रेम की यह प्रवृत्ति निश्चय ही परम्परा से भिन्न ही दिखाई देती है। जीवन में मात्र प्रेम की दिवानगी ही सब कुछ नहीं है परन्तु कर्तव्यों का पालन भी निहित होना चाहिए।

दोहाकार प्रकृति से भी वर्ण्य को लेकर मानव जीवन में उसे प्रस्तुत करता है। धूप जो इस संसार की अटल वास्तविकता है और इसी धूप के होने न होने से संसार में अनेक परिवर्तन आ जाते हैं। अतः डॉ. भसीन इसी प्रकृति की सजीवता को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि धूप

की उपस्थिति में हर रुप रंग में निश्चय ही बदलाव आ जाता है। धूप में गुलाबी रूप और भी मोहक हो जाता है क्योंकि धूप में लालिमा होती है। तेज होता है जिसका प्रभाव संसारिक अन्य रंगों पर निश्चित ही पडता है जहाँ अंधकार काला रंग होता है वहाँ भी धूप के पडते ही कालिमा गुलाबी प्रकाश में बदल जाती है। धूप को देखकर दोहाकार के मन में शृंगारिकता का जो अति सौंदर्यमय भाव उभरा हैं उसी का वर्णन निम्न है -

कर हस्ताक्षर धूप के खिला गुलाबी रूप।
चले किरन दल पाटने, अंधकार के कूप।।(139)

आधुनिक दोहाकारों ने निश्चय ही मानव जीवन के साथ प्रकृति के सौंदर्य को भी जोडा है -

कल नव किस लय दल कसे, आज हँसे ले बौर।
इस बसन्त का अन्त है, बात तुम्हारी और।।(140)

सामयिक श्रृंगारिक दोहों में जहाँ एक ओर मधुर शृंगार का वर्णन मिलता है वहीं दूसरी ओर जीवन से जुडे कोमल भाव भी लिपटे प्राप्त होते हैं। यदि काँटों को फूल प्राप्त हो जायें तो निश्चय ही वह आनंदित हो उठता है। जीवन में कभी-कभी गलती से भी हो जाता है और कभी फूल का भी अपना निजी स्वार्थ छीपा होता है जैसे कोई पुष्पलता बबूल पर छैल कर चढ जाय और पुष्पित होकर अपना सौंदर्य दिखाये तो लता का आधार बना बबूल भी सौन्दर्य पाता है।

एक पुष्पिता वल्लरी कर बैठी क्या भूल।
उसे सहेजे अंक में फूला फिरे बबूल।।(141)

प्रकृति के मनोरम सौन्दर्य को प्रस्तुत करते हुए दोहाकार श्री कुमार रवीन्द्र धूप से नहायी हुई भोर का वर्णन करते हैं। प्रातः काल का वह मनोरम रूप जिसमें सूर्य की लाल सतरंगी किरणे पूरे आसमान पर छा जातीं हैं। इन किरणों से निकलने वाले रंग एक सुनहरा वातावरण प्रस्तुत करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानों प्रकृति दुलहन के रूप में सजी बैठी हों -

फिर करवट लेकर उठी नयी नवेली भोर।
आसमान के घाट पर हुआ रंग का शोर।।(142)

सामयिक दोहों में जहाँ शृंगारिकता की वात आती है तो वहाँ निश्चय ही मानव के साथ प्रकृति का मेल सम्भव रहता है। कदाचित छायावादी परम्परा का ही प्रभाव यहाँ दिखाई देता है जो आधुनिक कवियों को प्रकृति प्रेम की ओर आकर्षित करता है। जैसे निम्न दोहे में ही देखिए

कि कुम्हलाये हुए मन को जब नेह का जल मिलता है तो दोहाकार को पूरी प्रकृति का मनोरम सौन्दर्य ही याद आता है जिसमें भारत की सौन्दर्य भूमि कश्मीर को दोहाकार ने निश्चय ही याद किया है-

कुम्हलाये मन पर गिरा, नेह भरा जब नीर।
नस नस शिमला हो गई, रोम रोम कश्मीर ।।(143)

आधुनिक साहित्यकारों ने घर से निकलकर संसार का सौंदर्य देखा है। खेत, खलिहान, जंगल, दिन, रात, पहर, आदि अनेक अनेक जगह व समय पर स्वयं को लाकर खड़ा किया है। सामयिक साहित्य में हमें स्पष्ट दिखाई देता है कि सौन्दर्य या श्रृंगार मात्र खूब सूरती में ही नहीं है वरन् बदसूरती में भी है कहने का तात्पर्य है कि खूबसूरती देखनेवाले की आँखों में होती है। देखने का जब दृष्टिकोण ही वह हो कि सब कुछ सौन्दर्य मय दिखायी दे। दोहाकार सृष्टि में घूमा फिरा है। अतः बडी ही नजदीकी का अनुभव वह अपने दोहों में प्रकट करता है। प्रकृति के ही श्रृंगारिक सौंदर्य को वर्णित करते हुए दोहाकार श्री कृष्णेश्वर डींगर कहते हैं -

गेंदा पगडी बाँधकर बार-बार बलि जाय।
सरसों नाच दिखा रही, पछवा संग बलखाय ।।(144)
हरे खेत में बालियाँ सिर पर ओढे धूप।
नाच रहीं मैदान में ले परियों का रूप ।।

दोहाकार को इन हरे खेत की बालियों में परियों का रुप दिखाई देता है और पूरे खेत को रास का मैदान बताकर उसमें इन परियों को नाचते हुए प्रकट किया जा रहा है। प्रकृति की छटा से चुराया हुआ यह दृश्य वास्तव में परंपरा से अलग कवि के अभिनव प्रयोग की सटीक व्यंजना है। खेत, मैदान में फैली हरी घास कवि को हरे रंग का गलीचा प्रतीत को रही है। जिस पर सुनहरी धूप बड़ी ही चंचलता के साथ चलती चली जाती है और अनुपम सौन्दर्य फैलाते हुए कवि का मन हर लेती है। सामयिक दोहों में श्रृंगार के वर्णन की यह छटा वास्तव में श्रृंगार के नये वर्ण्य को प्रस्तुत करती है। श्री कृष्ण शर्मा के दोहों में जहाँ सौंदर्यवान प्रकृति के दर्शन होते हैं वहीं साथ ही साथ मानव के जीवन की ऐसी झाँकी भी प्राप्त होती है जिसमें आसमान में उड़ती हुई बदलियाँ एक आम मनुष्य के लिए कोई खास आकर्षक नहीं है। परन्तु कवि की नजर इनमें बहुत कुछ देखती है। प्रस्तुत दोहे में श्रीकृष्ण शर्मा जी ने बड़ा ही मनोहारी श्रृंगार का वर्णन किया है -

आदिवासियों की तरह वस्त्र पहन रंगीन।
मँडई करने जा रहीं, ये बदलियाँ हसीन ।।(145)

प्रकृति और मावन संस्कृति की सुन्दरतम् छटा को एक ही सूत्र में बाँधकर दोहाकार निश्चय ही विषय वर्णन में सफल हुआ है। इसी दृष्टि को भावों में व्यक्त करते श्री माहेश्वर तिवारी प्रकृति के नियम और समय सापेक्ष परिवर्तन की छटा को अपने दोहों के माध्यम से व्यक्त करते हैं।

जाड़ा आते ही प्रकृति बदले कितने रूप।
पछुआ प्रौढा-सी लगे और नवोढा धूप।।[146]
कोयल दूत बसंत की फूल सिपह सालार।
बदला-बदला-सा लगे पेड़ों का व्यवहार।।

निश्चय ही कवि के ऐसे भाव छायावादी परम्परा से प्रभावित प्रतीत होते हैं जिनमें शृंगार अभिव्यक्ति की छटा के साथ प्रकृति के व्यवहार व मौसम परिवर्तन की बात भी की गयी है। कवि के ऐसे वर्ण्य प्रयोगों से आनंद के साथ-साथ हमें प्रकृति सम्बंधित ज्ञान भी प्राप्त होता है।

दोहाकार भगवत दुबे पौराणिक परम्परा से राधा और श्याम के चरित्र को लेकर अभिनव वर्ण्य को प्रस्तुत करते हुए वर्णन की मनोरम छटा प्रस्तुत करते हैं। यहाँ भी कवि प्रकृति और चरित्र को केन्द्र में रखकर शृंगार वर्णन करता है। कवि उमड़ती हुई जल से भरी घटाओं को राधा बताकर तपते हुए श्याम रुपी खेत की प्यास बुझाने की बात करता है और धरती को राधा-श्याम के मिलन से गोकुल धाम बना देता है-

राधा-सी उमड़ी घटा, खेत पियासे श्याम।
सावन-भादों में हुई धरती गोकुल धाम।।[147]

आज निश्चय ही प्रकृति मावन जीवन के साथ अटूट विश्वास से जुडी हुई है। इसलिए सामयिक मानव जीवन का जहाँ भी संदर्भ आता है वहीं प्रकृति की भूमिका स्पष्ट सामने आती है। यह कहना गलत न होगा की मानव के सौंदर्य श्रृंगार में प्रकृति बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। जैसे फागुन का मौसम आते ही मन तन में अनेक अनुरागी तरंगे उठने लगती है। श्री कैलाश गौतम प्रकृति और मानव के मध्य शृंगार की डोर बाँधनेवाले एक ऐसे चितेरे हैं जो अपने वर्ण्य में नित नये प्रयगों की झांकी प्रस्तुत करते हैं -

गोरी धूप कछार की हम सरसों के फूल।
जब जब होंगे सामने,तब तब होगी भूल।।[148]
नदी किनारे इस तरह खुली पीठ से धूप।
जैसे बाँझ गोद में लिए सगुन का सूप।।

लट बिखरी आँचल उडा, खुले नदी के द्वीप।
पारे जैसी काँपती और हाँफती सीप।।

प्रकृति और मानव के संयोग की यह सुनिदरता आधुनिक दोहों में देखते ही बनती हैं। कवि आस-पास के वातावरण में चारों तरफ सुन्दर ही सुन्दर देखता है चाहे खिली हुई चाँदनी चैत की हो या कार्तिक की अमावस, प्रकृति हमेशा सुन्दर ही लगती है।

भींगे कपड़ों में दिखे कैसा धरा उभार।
जला-जलाकर बिजलियाँ, बादल रहे निहार।।(149)

प्रकृति में बरसात के स्वभाविक द्रश्य का वर्णन कवि करता है। परन्तु इस स्वभाविकता में कितनी श्रृंगारिकता है? कितना आनंद है? यह तो कवि की दृष्टि ही समझ पाती है। बरसात में बिजली का चमकना तो समस्त मानव जात देखती है। परन्तु उपर्युक्त दोहे में दोहाकार उर्मिले ने कितना मनोरम वर्ण्य प्रस्तुत किया है जिसमें सजीवता का बोध होने लगता है। प्रकृति के स्वभाविक दृश्य में भी सामयिक दोहाकार एक नवीनता के साथ ही देखता है जैसे निम्न दोहे में चाँद और उसमें लगे दाग के विषय मे तो अनेक मान्यताएँ प्रचलित हैं मगर डॉ. उर्मिलेश कहते हैं कि-

एक रात बस चाँद को लिया रात ने चूम।
वही चिह्न ले आज तक चाँद रहा है घूम।।(150)

समय के चलते मान्यताओं में भी परिवर्तन आना सम्भव होता है। फिर कवि की दृष्टि कहाँ तक जाय कुछ कहा नही जा सकता। क्योंकि साहित्य में गणित के नियम लागू नहीं होते, साहित्य में एक और एक दो नहीं होते, बल्कि एक ही होता है। यहाँ पर मस्तिष्क की अपेक्षा दिल से अधिक काम लिया जाता है। जीवन मे सबकुछ पास होते हुए भी कभी-कभी पूरा जीवन सूना लगता है। एक प्यास हमेशा सताती रहती है। जिस प्रकार सीपी समुद्र में रहकर भी प्यासी रहती है इसी परिपेक्ष में अभिनव वर्ण्य प्रस्तुत करते हुए डॉ. अनन्तराम मिश्र कहते हैं कि -

यदि समुद्र से भी कभी बुझती पगली प्यास।
तो सीपी क्यों पालती, स्वाति बिन्दु की आस।।(151)

सृष्टि में वर्षाऋतु सभी ऋतुओं से श्रेष्ठ मानी गयी है। इस ऋतु में मानव के साथ-साथ समस्त प्राणीयों के भावों का इज़हार मिलता है। दोहाकार श्री ध्रुवेन्द्र भदौरिया ऐसे ही वर्षा के प्रभाव का वर्णन करते हुए बताते हैं कि-

बरखा रानी हर्ष से, सबको करे विभोर।
गीत पपीहे गा रहे, नांच रहे हैं मोर।।[152]

वर्षा के सौंदर्यमयी रूप का वर्णन करते हुए आगे कवि कहता है कि-

**तम्बू ताने घन खड़े रिम झिम बन्दनवार।
पुरवा पंथ बुहारती, बरखा रही पधार।।**

प्रकृति से सीधे मानव जीवन में झाँकते हुए श्री रामानुज त्रिपाठी दाम्पत्य में निहित प्रेम का सुन्दर वर्णन करते हैं जिसमें पिया परदेशी की राह तकती प्रेयसी के हृदय की मार्मिक पीर का वर्णन मिलता है -

**झाँक-झाँक कर ओट से, लुक छिप खोल किवाड़।
दिन तो काटे कट गये, रातें हुई पहाड़।।**[153]

उपर्युक्त दोहे में त्रिपाठी जी समाज की मर्यादा का पालन करती नायिका का विरह वर्णन करते हैं जिसमें पिया रोजी रोटी के लिए परदेश गये हैं और अकेली प्रेयसी प्रीतम के बिना व्याकुल है। दाम्पत्य प्रेम के सौन्दर्य से युक्त कवि के ये भाव अभिनव वर्ण्य को प्रस्तुत करते हैं।

**कैसा टोना कर गया यह छलिया मधुमास।
हालाहल कत पी गये, किन्तु गयी न प्यास।।**[154]

प्राकृतिक सौंदर्य का आभास समस्त प्राणी, जीव जन्तु को होता है। अतः प्रकृति में अपनी प्रवृत्ति के अनुसार समस्त जीव व्यवहार करने लगते हैं। दोहाकार श्री रामेश्वर हरिद ऐसे ही वर्ण्य को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं -

**मचल रहीं हैं तितलियाँ रंग बिरंगी ताश ।
कली-कली इठला रही भ्रमर भये बदमाश।।**[155]
**भौरे मँडराने लगे अब फूलों के गाँव।
कलियाँ लज्जा छोड़कर, देतीं उनको छाँव।।**

दोहाकार ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' प्रेम की अगन व उसको विम्बित करने वाले वर्ण्य को नवीनता प्रदान करते हुए प्रस्तुत करते हैं। प्रेम की अगन परम्परित साहित्य में अनेक वर्ण्यों के द्वारा प्रस्तुत हुई है। परन्तु यहाँ कवि ने सामयिक सरल भाव से विम्ब को प्रस्तुत किया है। जब प्रेम की आग लग जाती है तो कोई उसे नहीं बुझा पाता जैसे गरम तवे पर पानी पडता है तो वह भाप बनकर छू हो जाता है। उसी तरह प्रेम के पागलपन में कोई सीख काम नहीं करती। सब

छू हो जाती है। यहाँ कवि प्रेम की मार्मिकता का वर्णन अभिनव उपमानों से करता है-

प्रेम-अग्नि मे तन तपे, कोई सीख न भाय।
गरम तवे पर जल गिरे भाप बने उड जाय॥(156)

प्रेम मे गोरी की सुन्दरता का अतिसयोक्ति पूर्ण वर्णन करते हुए कवि कहता है कि-

है अचरज गोरी खड़ी सूर्यमुखी ले हाथ।
चन्द्रमुखी-सूरजमुखी, दोनों हैं इक साथ॥(157)

प्रेम और सुन्दरता का बडे ही सटीक उपमानों के द्वारा वर्णन देखते ही बनता है। इस वर्णन में कवि की अपनी दृष्टि कितनी सौंदर्यमयी है इसका भी पता चलता हैं। साथ ही कवि का अनुभव संसार व उसमें कवि की झाँकने की कला के मनोहारी दर्शन होते हैं -

गोरी-नर्म हथेलियाँ, उनमें जगमग दीप।
मोती को थामे हुए खुली हुई ज्यों सीप॥(158)

कितनी मार्मिकता के साथ कवि ने गोरी की हथेलियों का सौंदर्य वर्णन किया है। श्रृंगार की यह छटा निश्चय ही कवि के गहन अनुभव का प्रमाण है जिसमें सौन्दर्य की नवीन प्रस्तुति मिलती है।

आज का दौर आपाधापी और भागमभाग का दौर है। ऐसे में किसी के पास सूक्ष्म सौंदर्य को देखने का वक्त नहीं है। अतः आज समाज में अधिकांशतः स्थूल सौंदर्य ही अधिक प्रचलित हो गया है। मानव समाज रोटी, कपड़ा, मकान के लिए न जाने कहां कहां भटक रहा है। ऐसे में वास्तविकता को वह खोता जा रहा है। परन्तु जिसके पास आज भी समय है वही सोच है वह आज भी दिल में हर दर्द का एहसास करता है। वह मिलन, विरह का मतलब समझता है। सामयिक दोहों में वर्ण्य कुछ भी प्रस्तुत हुआ हो मगर हर वर्ण्य मानव समाजके सात ही ज़ुड़ा हुआ है। आधुनिक सोच, शैली का वर्णन करता, दाम्पत्य प्रेम के सौन्दर्य से भरे हुए इस दोहे को, प्रस्तुत करते हुए डॉ. विष्णु विराट कहते हैं -

पिय परदेसी आत ही भरि भेंटी इक साथ।
मेहंदी मेहंदी है गए, गोबर बारे हाथ॥(159)

इस प्रकार सौन्दर्य को प्रस्तुत करने वाले अनेक नवीन प्रयोग इन दोहों में देखे जा ते हैं जो दोहा छंद के अभिनव वर्ण्य को प्रस्ततु करते हैं।

सांस्कृतिक दोहों का अभिनव सरोकार

किसी भी देश या समाज की संस्कृति ही उसकी पहचान होती है। इसी पहचान के कारण दुनियाँ में प्रतिष्ठा बढ़ती है। प्रत्येक समाज या देशको अपनी संस्कृति पर गर्व होना चाहिए। और उसकी रक्षा एवं प्रतिष्ठा के लिए सर्वस्व न्योछावर कर देना चाहिए। परन्तु आज ऐसे उपदेश खोखले लगते हैं, मानव भौतिक चका चौंध में फँसकर अपनी परम्परित संस्कृति को भुलाता जा रहा है। यह सबसे बडी विडम्बना हैं कि हम अपने सांस्कृतिक मूल्यों को नहीं समझ पा रहे हैं और देश-विदेश की देखा-देखी में न जाने किस रास्ते पर दौड़े चले जा रहे हैं जिस पर न कोई मंजिल है न कोई पडाव।

आज भारतीय मानव पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करके अपने आपको मोर्डन (आधुनिक) बताता है परन्तु क्या, वास्तव में हम इतना विकास कर पाये हैं कि हमारे तन, मन दोनों पर हमारी संस्कृति फ़ीकी लगे। साहित्य समाज का दर्पण होता है। अतः समय समय पर साहित्यकार हमें अपनी सभ्यता को बचाए रखने के लिए अपनी कलम चलाता है। इसी के परिपेक्ष में दोहाकार भी अपने कर्तव्यों का वहन करते हए समाज को आईना दिखाते हैं और निरन्तर सचेत भी करता है। दोहाकार 'समीप' समाज से प्रश्न करते हैं कि क्या वास्तव में हम इतने आधुनिक हो गये हैं कि अपने सांस्कृतिक मूल्यों को भुला दें -

इतनी समृद्धि हुई इतना हुआ विकास।
भूलें हम अपनी जमी, भूलें निज आकाश।।[160]
सुन्रदता और योग्यता में बिगडा सम्बंध।
सुन्दर दिखती झील के पानी में दुर्गंध।।

आज भौतिक युग में मात्र ऊपरी सुन्दरता को सभी देखते हैं। आंतरिक पवित्रता पर किसी की नज़र नहीं जाती। उपर्युक्त दोहा इसी परिपेक्ष में दोहाकार ने रचा है जो नव्य प्रयोग की एक अदभुत छटा है।

हमारी वर्षो पुरानी संस्कृति जहाँ समस्त मानव समाज को एकता के सूत्र में बँधना सिखाती है। वहीं हम उसके विपरीत बढ़ रहे हैं। कारण कि अब हर कोई स्वतंत्रता और मुक्त जीवन पसंद करने लगा है। परिवारों में आये हुए आन्तरिक मंन मुटाव, मतभेद, असंगति आदि के कारण निश्चय ही आज मानव मानसिक रूप से टूट गया है और अपनी सांस्कृतिक परम्परा को तोडकर पाश्चात्य सभ्यता अपना रहा है। दोहाकार हरे राम समीप इन्हीं मानवीय सम्बंधो को केन्द्र में रखकर कहते हैं -

बहुत पुराने हो गये मनके सारे साज़।
करते हैं ये आजकल, बेढंगी आवाज़।।[161]

साथ ही दोहाकार अपने भारतीय संस्कृति की बात बताते हुए कहते हैं कि हमने तो अपनी संस्कृति से यही सीखा है कि-

जितना कर सकते करो खुशियों का विस्तार।
लेकिन दुख्खों का कभी, करना नहीं प्रचार।।[162]

उपर्युक्त दोहे में यह बात तो अटल सत्य ही है कि हमने संसार को दया, क्षमा और त्याग की सीख दी है। स्वयं कष्ट सहकर, समस्त मानव जाति का कल्याण किया है जैसे दधीचि ने अपने अस्थि देकर हमारी सांस्कृतिक परम्परा को निभाया था। आज इस सभ्यता के हनन होने से त्याग की वह भावना मानवता से लुप्त सी हो गयी है। आज हर व्यक्ति मात्र अपने लिए ही जीता है स्वार्थ नस-नस में भरा हुआ है। फिर भी आज दोहाकार पुनः समाज को सही रास्ता बताते हुए श्रेष्ठ जीवन की कला को बयान करता है। श्री विश्व प्रकाश दीक्षित कहते हैं -

बहुविध जो त्रासित रहे, सहे सभी की हूल।
बहू वही है अर्थदा शूल जिसे हो फूल।।[163]
है अलभ्य अब सभ्यता, या नव युग की सीख।
नहीं नागरिक नगर में अब पड़ते हैं दीख।।

इसीलिए मनुष्यता के परिपेक्ष में साहित्य में कहा भी गया है कि मनुष्य वही मनुष्य है जो मनुष्य के लिए मरे ''मगर जहाँ मात्र स्वार्थ ही बचा हो वहाँ साहित्यकारों की ऐसी सीखें काम नहीं आतीं। आज दिन प्रतिदिन प्रतिद्वन्दता की होड़ लगी हुई है ऐसे में मानव अपने सांस्कृतिक मूल्यों को कुचलकर कुछ नया प्राप्त करना चाहता है जैसे कौआ हंस की चाल सीखने में अपनी चाल भी भूल जाता है। ऐसे ही नव्य वर्ण्य में प्रस्तुत विचार को व्यक्त करते हुए दोहाकार 'बटुक' जी कहते हैं -

अब बदले परिवेश में रहा न निज कुछ शेष।
हुए पुराने आरचण, भाषा, भूषा, वेष।।[164]
कला, फिल्म, संस्कृति, प्रगति साहित्यिक संवाद।
जीवन-मूल्यों में हुआ, पश्चिम का अनुवाद।।

उपर्युक्त दो टूक शब्दों में दोहाकार ने पूरे जीवन का चिट्ठा खोलकर रख दिया है। जीवन की वास्तविकता सहज ही इसदोहे में झलकती दिखायी देती है।

दोहा छंद का अपना मौलिक गुण व्यंग्य से चोट करने का भी रहा है। अतः जब दोहाकार को ऐसे वर्ण्य विषय मिल जाते हैं तो वह निश्चय ही व्यंग्य के बाणों से अपनी बात कहता है। आज आपसी बोलचाल में प्रयुक्त कुछ शब्दों को लेकर दोहाकार कहता है -

अधुना संस्कृति के चले, बढ़ा 'बाइ' का रोग।
मिलें परस्पर तो करें, हाय-हाय सब लोग।।(165)

भारतीय परम्परा में हाय-हाय जो अपसगुन दर्शाता शब्द है आज इन्ही शब्दों से भारतीय समाज खुशी प्रकट करता है। कुमार रवीन्द्र कहते हैं कि -

हर चौखट पर धूप ने रचे अलौकिक हास।
किन्तु सभ्यता ने रचे हैं केवल संत्रास।।(166)

अपनी संस्कृति के खोते मनुष्य के हृदय में संवेदनायें खत्म होतीं जा रहीं हैं। अतः अकेलापन का त्रास उसे सता रहा है। आज एक ही घर के लोग नमक तक अलग-अलग खाने लगे हैं। कोई तीखा अधिक खाते हैं तो कोई मीठा, सबके अपने स्वाद हैं तो सबके अपने स्वार्थ भी। भारतीय समाज में पहले जहाँ एक ही पकवान को पूराघर पसंद करता था, आज वहाँ प्रश्न चिह्न लग गया है। ऐसे मानव जीवन की वास्तविकता से कवि को अभिनव वर्ण्य प्रस्तुत करने का मौका मिल जाता है और एक नया विषय भी मिल जाता है -

राख हुई संवेदना जले नमक के खेत।
घर आँगन में डोलते सन्नाटों के प्रेत।।

कवि की दृष्टि नगर, गाँव देश-विदेश सभी जगह रहती है और अनेक संवेदनाओं का अनुभव भी करता है। ऐसे ही एक अनुभव को प्रकट करते हुए दोहाकार हस्तीमल हस्ती जी कहते हैं कि पाश्चात्य सभ्यता का जितना प्रभाव शहर नगर, में पडा है उतना अभी देहातों तक नहीं पहुंचा है। देहात में अभी-भी कहीं न कहीं अपनी संस्कृति के दर्शन अवश्य हो जाते हैं। इसीलिए दोहाकार नगर और गाँव की तुलना करते हुए कहता है कि -

बात-बात में पेंच है बात-बात में घात।
महानगर तुझसे भला, मेरा वो देहात।।(167)

हमारी संस्कृति तो हमें पवित्र मन से साथ-साथ हिलमिल कर रहना सिखाती है। एक दूसरे के दुःखों को बाँटना सिखाती है हम दूसरों के दुःख में दुःखी और दूसरों के सुख में सुखी होते हैं। परन्तु आज यह स्थिति निरंतर बदलती जा रही है। आज प्रचार-प्रसार मीडिया इतना बढ़ गया

है कि एक पल में ही हम पूरी दुनिया देख लेते. हैं। परिणामतः हम अपनी संस्कृति से दूसरों की संस्कृति की तुलना शीघ्र ही कर लेते हैं । श्री कृष्ेश्वर डींगर जी कहते हैं कि -

टी.वी. देख विदेश का संस्कृति हुई अनाथ।
गाँधी को गाली मिले, अप संस्कृति के साथ।।(168)

आपसी हित प्रेम और निरंतर खोती हुई सभ्यता के कारण मानव समाज अंधियारी सुरंग की ओर निरंतर बढता जा रहा है। जैसे पशुओं का कोई ईमान, कोई धर्म, कोई मर्यादा नहीं होती। ठीक उसी प्रकार आज मानव भी इसी राह पर अग्रसर होता जा रहा है। दोहाकार श्रीकृष्ण शर्मा मानव के बदलते परिवेश से चिंतित हैं और कहते हैं कि -

अप संस्कृति का दीखता कोई ओर न छोर।
लगता है हो जाएगा सभ्य आदमी ढ़ोर।।(169)

मावन जीवन में सभ्यता और संस्कृति का होना अतिआवश्यक है इसी विषय को समझाते हुए दोहाकार कहता है कि -

हाड माँस भर ही नहीं होता है इंसान।
जैसे गारा-ईंट को कहते नहीं मकान।।(170)

भारतीय सामाजिक संस्कृति व सभ्यका का निर्वाह करते हुए बिम्ब को अभिनव वर्ण्य से प्रस्तुत करते हुए दोहाकार कहता है कि -

भोर हुई घर जग उठे, रहीं चूड़ियाँ जाग।
चूल्हे औ चौके जगे जाग उठी है आग।।

आज सामाजिक संस्कृति के हनन होने से न ही अब सुहावनी भोर ही और न ही चूड़ियों की खनक सुनाई देती है। अब तो रात के बारह बजे दिन निकलता है और सुबह को छः बजे रात होती हैं। मावन के ऐसे बदले हुए परिवेश के कारण निश्चय ही मन दुःखी है और फिर भी हम लडखडाते हुए चलते चले जा रहे हैं -

आँखों से मजबूर हम साथ न देते हाथ।
फिर भी खेले जा रहे हम शकुनी के साथ।।(171)

श्री माहेश्वर तिवारी धरम और सभ्यता के कम होते हुए मूल्यों से चिंतित है। वे समाज में व्याप्त ऐसे यथार्थ का वर्णन करते हुए कहते हैं कि -

नेम-धरम सारे हुए, ऐसे आज अनाथ।
गंगा जल बिकने लगा, मूंगफली के साथ।।(172)

कुदरत ने भारतीय समाज को अनेक नेमे दी हैं। परन्तु हम उनका उपयोग न कर उन्हे अनाथ बना रहे हैं और भौतिक चमक में फँसकर अपने ही अस्तित्व को खतरे में डाल रहे हैं। हम अपनी परम्परा भूल कर देखा देखी में अपना मान कम कर रहे हैं। अपनी ही सभ्यता को नीचा बताकर स्वयं मानव समाज अपने ही पाँव कुल्हाडी मार रहा है। श्री भगवत दुबे मानव के ऐसे व्यवहार से खिन्न हैं और व्यंग्यात्मक प्रहार करके निम्न दोहे में कहते हैं कि -

संस्कृति के नैवेद्य से मन भर रहा उचाट।
लोग सभ्यता की रहे जूठी पत्तल चाट।।(173)

मानव के जीवन में सच्चा आत्म सम्मान तभी होता है। जब वह अपने स्वयं की सभ्यता को अपनाकर अपने मूल्यों में जिये और अपनी ही संस्कृति में रहकर गर्व का अनुभव करें। आज मानवीय मूल्यों के बदल जाने से स्वयं हमें ही अपमानित होना पडता है। हम अपने ही समाज में परायी सभ्यता एवं संस्कृति को अपना रहे हैं। आज हमारे हाव भाव, बोलचाल, सोच-विचार सभी में पर्याप्त अन्तर आ गया है। डॉ. वेद प्रकाश पाण्डेय कहते हैं कि -

मूल्य, मान, करुणा, क्षमा, प्रेम, शील, ईमान।
इनका पहले आज-सा हुआ न था अपमान।।(174)

देखा-देखी करना आज फैशन बन गयी है जो दृश्य या व्यवहार हम फिल्म आदि किसी जगह में देखते हैं। उन्हें अपने जीवन में अवश्य ही अपनाने की कोशिश करते हैं। महज भौतिक सुख को प्राप्त करने के लिए हम अपनी संस्कृति का नाश कर बैठते हैं। डॉ उर्मिलेश ऐसे ही बदलते हुए परिवेश का वर्णन करते हुए कहते हैं कि -

थाली बदली प्लेट में हुआ कटोरा तंग।
सभी बरतनों पर चढ़ा नयी सदी का रंग।।(175)
आतिशबाजी गुम हुई बैण्ड हुए ना पैद।
बारातों के रत जगे, होटल में हैं कैद।।

कहने को तो भारत पर अंग्रेजों ने अनेक वर्षो तक राज किया परन्तु हमारी संस्कृति एवं परम्परा में कोई फर्क नहीं पड़ा। हम अपना वजूद बचाये हुए निरंतर कार्यशील रहे और अपनी सभ्यता को नष्ट नहीं होने दिया। परन्तु स्वतंत्रता के बाद हम पर अंग्रेजी का ऐसा भूत सवार हुआ है कि

आज सभी भारतीय मूल्य खतरे में पड़ गये हैं और अपनी पहचान स्वयं ही खोते जा रहे हैं। कभी सत्य, अहिंसा और न्याय हमारे हथियार हुआ करते थे परन्तु पश्चिमी ज्वार ने सब नष्ट कर दिया है। श्री सुरेश कुमार शुक्ल 'संदेश' कहते हैं कि -

रीति-नीति बदली सखे बदल गया व्यवहार।
आँसू-आँसू हो गया, टूट-टूट कर प्यार।।[176]
घर घर में फैला सखे प्रभल पश्चिमी रोग।
अपनी संस्कृति-सभ्यता, मिटा रहे खुद लोग।।

इतिहास गवाह है जब व्यक्ति अपनी सभ्यता संस्कृति को मिटाता है तो वह खुद भी मिट जाता है। स्वतंत्र रुप से उसका कोई अस्तित्व नहीं रहता। आज समाज में हम अपनी सांस्कृतिक नेमों को मिटा कर देखा देखी में सब तहस नहस कर रहे हैं :-

पनपे पर्यावरण में यहाँ विदेशी पेंड़।
हुए अपेक्षित आँवला, जामुन हरड बहेड़।।[177]

विदेशी पेड़ों की ओर निरंतर लगाव बढता जा रहा है और जीवन को सुखमय, निरोग बनाने के गुण रखनेवाले हमारे देशी पेड़ अब अच्छे नहीं लग रहे हैं। एक ज़माना था आँगन में इन पेडों के होने से कोई बीमार नहीं पडता था। मगर अब चारों ओर प्रदूषण बिमारियाँ फैली है। इन्हें मिटाने के लिए अब विदेशी दवाइयों का प्रयोग हो रहा है। हम घरेलू आयुर्वेद, होमोपेथ, इलाज भूल कर अपने आप को ही पतन की खाई में धकेल रहे हैं। इस प्रकार हमारे समाज के स्वास्थ का ध्यान रखनेवाले दोहाकार श्री शिवशरण दुबे जीवन जीने की सही राह दिखाते हैं।

कहते हैं समय बडा बलवान होता है। वह बडे-बडे तूफानों के रास्ते मोड भी सकता है, तो दूसरी ओर तूफान ला भी सकता है। समय की मार कोई नहीं समझ सकता, आज हम चश्मा लगाकर निकलते हैं जो हम देखना चाहते हैं वही हमें दिखायी देता है। वाणी पर हम ध्यान ही नहीं देते। परन्तु भौतिकता की चमक दमक लिए समय आज न जाने क्या क्या दृश्य दिखा रहा है। कहने को तो हम अब इक्कीसवीं सदी में चल रहे हैं परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि हम अपना भूतकाल भुला दें। क्योंकि भूतकाल के अनुभव ही भविष्य की प्रगति की चावी होते हैं, यदि हम अपने अनुभव, सभ्यता संस्कृति भूल गये तो आगे भविष्य में अनेक मुसीबतें झेलनी होगीं। दोहाकार रामेश्वर हरिद समय के दर्पण मे कुछ प्रतिविम्ब देखते हुए कहते हैं -

समय शिला पर उभरते, अजब-अजब आलेख।
जो न कभी देखा गया, इस युग में वह देख।।[178]

समाज में न तो अब पुरखों या बुजुर्गो का स्थान रहा है न उनकी अनुभवित सीख को कोई मानता है आज समाज में बूढा आदमी कचरा समझा जाने लगा है। नयी पीढी अपने आप को आधुनिक समझकर निरंतर भागी जा रही है। जीवन के पथ के अनुभव कोई नहीं जानता। बडे बूढों की शीख आज महज एक बकवास लगती है। समाज से मिट रही हमारी सोच निरन्तर परम्परित सभ्यता का नाश कर रही हैं। श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' कुछ ऐसे ही भावों को दोहा छंद में प्रकट करते हैं -

शनैः शनैः मिटने लगे, संस्कृति के आधार।
अनुष्ठान भर रह गये, पुरखों के संस्कार।।[179]
चका चौंध की भीड़ में ऐसे उखडे पाँव।
पल भर में छूटे सभी पुरखों वाले गाँव।।
कहाँ न जाने खो गया अपना साँझा गाँव।
इसके घर में पेड़ था उसके घर थी छाँव।।

उपर्युक्त दोहों से स्पष्ट है कि हमारी संस्कृति कितनी महान रही है। परन्तु चका चौंध में फँसकर अपनी सभ्यता के साथ-साथ स्वयं अपनी पहचान तक खो रही है । हमारे देश में आज भी पेड़ से अधिक जड का महत्व है व्यक्ति चका चौंध में फँसकर भले ही विदेश चला जाय पर उसकी असली पहचान उसके खानदान में ही रहती है उसके पुरखों की ज़मीन ही असली संपत्ति मानी जाती है। मगर आज सारे मूल्यों को भौतिक चका चौंध ने अंधकार में धकेल दिया है।

मगर जीवन की सच्चाई दोहाकार आज भी स्पष्ट शब्दों में कह रहा है -

बडे जनों की बात में अनुभव बेशुम्मार।
यदि लाओ व्यवहार मं नहीं मिलेगी हार।।[180]

इस प्रकार सांस्कृतिक भावों को नव्य सरोकार के साथ प्रस्ततु करने वाले ये दोहे निश्च़ ही समसामयिक कविता में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं, जिनमें जीवन जगत के अनेक नवीन दृश्य विद्यमान हैं।

दोहों की अभिनव साहित्यिक भूमिका

समाज सुधार, ज्ञान विज्ञान, आपसी भाईचारा, एक व्यक्ति का दूसरे के साथ कैसा व्यवहार होना चाहिए। इसका बोध, हमारी कला, संस्कृति आदि अनेक पहलू ऐसे हैं जो साहित्य पर ही निर्भर करते हैं। प्रत्येक समाज का अपना साहित्य होता है। जिसमें उसका जीवन निहित रहता

हैं कहने का तात्पर्य है कि मानव और साहित्य का चोली दामन का साथ है, हमारी सभी सामाजिक परम्पराओं का बोध इसी साहित्य से होता है। हमारी संस्कृति क्या थी? क्या है? किस काल में कौन सी प्रवृत्तियाँ प्रचलित थीं इन सबका प्रतिविम्ब साहित्य में होता है।

सामयिक साहित्य जगत् में आज आपाधापी हो गयी है। आज हर कोई अपने को साहित्यकार समझने लगा है। अपने मन के भाव शब्दों की गाँठ जोड़कर लिख दिये और बन गये साहित्यकार। इसी आपाधापी के कारण साहित्य की असली धारा छिन्न भिन्न सी हो गयी है। आज मात्र शब्दों को घुमा फिराकर एक बात को बार-बार हर कोई दोहरा रहा है। इसलिए श्री हरेराम समीप इसी साहित्य के संदर्भ में कहते हैं कि -

मिले आज साहित्य में बेमतलब की ऊब।
खूब चमकती धूप में जैसे जलती ट्यूब।।(181)

आज साहित्यिक बाजार में जो वास्तविक साहित्यकार हैं जिन्हे सम्मान मिलना चाहिए उनकी तो उपेक्षा हो रही है और बेमतलब के साहित्यकार बडे-बडे सम्मान और धन पा रहे हैं। आज समाज में साहित्य का एक मोहक बाज़ार बन गया है जिसमें सभी साहित्यकारों की बोलियाँ लगने लगीं हैं। श्री ''समीप'' कहते हैं -

पुरस्कार की लाटरी, सम्मानों की सेल।
साहित्यिक बाज़ार में देखी रेलमपेल।।(182)

इसी परिपेक्ष्य में इतिहास भी साक्षी है कि 'निराला' जैसे महान कवि की तत्कालीन साहित्यिक बाज़ार में कोई कीमत नहीं रही ऐसे साहित्यकार अपने कवि कर्म के पीछे सबकुछ लुटा देते हैं। परन्तु समाज उसे कुछ भी नहीं देता ऐसे में निश्चय ही सफल साहित्यकार अपना अपमान समझता है। साथ ही पारिवारिक दायित्व भी उसे जकड़े रखते हैं। ऐसे में परिणाम यह आता है कि-

अपनी सब प्रिय पुस्तकें मैने बेचीं आज।
घर-भर को पहना दिये उनके इच्छित ताज।।(183)

समाज में भरे हुए दूषणों में से यह भी एक दूषण है कि हम समय रहते सत्य को नहीं देखना चाहते ऐसे कई साहित्यकार आये और गये और कई आयेंगे भी साहित्य की यह धारा यूँ ही निरंतर बहती रहेगी।

मुख्यतः आज साहित्य में मानव जीवन के ही दर्शन होते हैं इसके लिए हमें मुंशी प्रेमचंद का शुक्रगुज़ार होना चाहिए कि उन्होंने साहित्य को मनोरंजन से हटाकर मानव समाज के साथ

जोड़ा तभी तो आज साहित्य में मानव मन के हाल ही सुनाई पड़ते हैं।

मै पढकर हैरान हूँ तेरी नई किताब।
आखिर कैसे लिख लिए, तूने मेरे ख्वाब॥[184]
कविता मन का आईना, इसमें व्यक्ति समाज।
प्रतिबिंबित होता रहे सबका काज-अकाज॥

शोषण, अन्याय, नीति, उत्पीडन, नाते रिस्ते आदि विषयों को लेकर और साहित्यिक रचनाएँ विपुल प्रमाण में हो रहीं हैं। अच्छे, बुरे का बोध इन रंचनाओं में मिलता है। यही भाव उतरकर आज सामयिक दोहे में आ गये हैं। यह कहने की जरूरत नहीं कि दोहा शैली ऐसी है जो गागर में पूरा का पूरा सागर भर देने की वृत्ति रखती है। अतः दोहे के माध्यम से दो टूक कह देना आज समय सापेक्ष हो गया है। वैसे भी लम्बे लेखों को पढने का समय हर किसीं के पास नहीं है। अतः दोहा ही इसका इलाज रह गया है। इसी लिए आज साहित्य में दोहे की लोकप्रियता निरंतर बढती जा रही है। श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' जी कविता के गुणों को प्रस्तुत करते हुए दोहा छन्द के माध्यम से कहते हैं कि -

सच्ची कविता है वही जिसमें मन की शान्ति।
अर्थ-साधना क्रान्ति की, शब्दों की विभ्रान्ति॥[185]

साहित्य में शब्दों की जितनी ही संक्षिप्तता और भावों की विशालता होगी साहित्य उतना ही श्रेष्ठ कहलायेगा। साहित्य में अनेक प्रकार के अलग-अलग शब्दों का समावेश होता है। अब यह हमारे ऊपर है अर्थात् पाठक-श्रोता पर है कि वह कब कैसा अर्थ ग्रहण करता है। श्री बटुक जी कहते हैं -

कारण अर्थ अनर्थ का अपनी अपनी दृष्टि।
नूतन शब्दों की हुई, इसीलिए तो सृष्टि॥[186]
शब्द-ब्रह्म है सूक्ष्मतम, अर्थ बृहद आकार।
सरस-विरस लगते रहे, रुचियों के अनुसार॥

निरन्तर साहित्य के बढ़ने से साहित्यकारों की जनसंख्या में भी वृद्धि हुई है। संसार में अब कोई भी बात या विषय साहित्य से अछूटा नहीं रहा है। अतः आज जो साहित्य सामने आ रहा है। अधिकांशत भूतकालीन साहित्य का अनुवाद ही लगता है। परन्तु साहित्य में अब ऐसे बहुत ही अल्प प्रमाण में साहित्यकार ऐसे हैं जो नवीन विषयों को खोजकर साहित्य रचनाएं कर रहे हैं।

इन सामयिक साहित्यकारों के अधिकांशतः अभिनव प्रयोग मानव जीवन से जुडे हैं क्योंकि मानव समाज में ही नित नये परिवर्तन चलते रहते हैं। आज बनी हुई साहित्य की स्थिति पर श्री बटुक जी कहते हैं -

अब सरकारी कूप में धुली हुई है भांग।
हर कोई साहित्य की तोड रहा है टांग।।(187)

समाज को किसी भी दिशा में मोड देने की ताकत साहित्य ही रखता है। आज कलम के सामने बडे-बडे अस्त्र-शस्त्र भी बौने हो गये हैं। कलम जहाँ बिगडे काज बनाती है तो वही कलम समय आने पर भूचाल भी ला सकती है। अतः समाज में अखबार, पत्रिकाएं अपना विशेष महत्व रखते हैं। जिनमें सम्पादक गण सामाजिक संतुलन बनाये रखने के लिए तथा अपने आप को भी अच्छा बनाये रखने के लिए साहित्य के साथ काफी लीपा पोती करते हैं -

आधा लेख विपक्ष में आधे में है पक्ष।
लीपा पोती में सदा, सम्पादक है दक्ष।।(188)

सही अर्थ में यदि देखा जाय तो सम्पादक गण भी अपने कर्तव्य भूल गये हैं। आज ये समाज का सही प्रतिबिम्ब दिखाने से डरते हैं। बटुक जी सच्चे सम्पादक के गुण बताते हुए कहते हैं -

नाक काटने में कुशल कीचड़ सके उचाल।
सम्पादक सच्चा वही रचे शब्द का जाल।।(189)

आज संसार की सभी कलाएं अपना मौलिक महत्व खोती जा रहीं हैं। सभी की कीमत लगने लगी है ऐसे में सारी कलाएं उद्योग बन गयीं हैं। साहित्यकला भी आज उद्योग बनकर नित नये ग्राहकों को खोजती रहती है। साहित्य की सेवा करके आज कमानेवालों ने अपनी जेबे भी भर लीं हैं। दोहाकार श्री जहीर कुरसी कहते हैं कि -

धीरे-धीरे हर कला बन बैठी उद्योग।
कला दलालों की तरह ढूंढे ग्राहक लोग।।(190)

काव्य कवि के मन की सहज अनुभूति हैं प्रत्येक काल में इन अनुभूतियों में पर्याप्त अन्तर आता रहा है। किसी काल में यह अनुभूतियाँ मौसम, परिवेश लख पावस से प्राप्त हुआ करती थी। मगर आज मानव मन की उलझने, उत्पीडनें काव्य का विषय बनीं हुई हैं। दोहाकार कृष्णेश्वर डींगर कविता के विषय में कहते हैं कि -

कविता होती थी सृजित, लख पावस परिवेश।
अब अन्तस के मेघ ही कविता का उन्मेष॥[191]
राजनीति साहित्य का, गठबंधन बेजोड़।
कुर्सी, यश के प्राप्ति हित लगी अनवरत होड़॥

श्री माहेश्वर तिवारी अबके साहित्य में आये हुए बदलाव के विषय में लिखते हैं कि-

सरोकार बदले हुए लगते हैं कुछ और।
कविता है कम बोलती कवि करते हैं शोर॥[192]

वह समय गुजर गया जब काव्य की एक पंक्ति पढ़ते ही वाह-वाह होने लगती थी। आज पूरा का पूरा काव्य-पाठ समाप्त हो जाता है। फिर भी ताली तक नहीं बजती। मात्र काव्य सुनाने वाला कवि ही जोर जोर से अपने काव्य की पंक्तियाँ दोहराते रहता है और किसी स्रोता को कुछ समझ तक नहीं आता। अतः श्रवित काव्य का कोई प्रतिसाद ही नहीं मिलता।

लाकर पटका समय ने कैसे ओघट घाट।
अनुभव तो गहरे हुए, कविता हुई सपाट॥[193]

आज साहित्य में गीत-नवगीत का जोर खूब चल रहा है। जिसमें छन्दों की कोई महिमा नहीं है। इसी कविता के विषय में आचार्य भगवत दुबे कहते हैं कि -

मुक्त छन्द के काव्य में हो यदि भाव प्रवाह।
समझा पूरा हो गया कविता का निर्वाह॥

आज के कवि सम्मेलनों को लेकर श्री माहेश्वर तिवारी कहते हैं -

कवि सम्मेलन में मिले, वेश्या चारण भाट।
तुलसी, सूर कबीरके वंशज खाते डांट॥[194]

वहीं डॉ. उर्मिलेश कवि सम्मेलन पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं -

नौटंकी से हो गये कवि सम्मेलन आज।
भाँड विदूषक बन गये कवियों के सरताज॥[195]

हमारे परम्परित भूतकालीन साहित्य में से कुछ भावों को उठाकर आज कवि उनमें शब्दों की तोड मरोडकर अपने सिक्के लगा रहे हैं। दोहाकार श्री ओम वर्मा प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी 'पूस की रात' से एक मुख्य भाव को लेकर दोहा छंद में प्रस्तुत करते हैं -

हल्कू से मुन्नी कहे मत खरचो इफरात।
बिन कम्बल कैसे कटे, माघ पूस की रात।।(196)

ठीक उसी प्रकार वर्माजी जयशंकर प्रसाद के खण्ड काव्य कामायनी से अह्मभाव लेकर दोहा छन्द में कहते हैं -

इड़ा नहीं श्रद्धा हमें देगी परमानंद।
कह गये हमें प्रसाद लिख कामायनी प्रबंध।।(197)

साहित्य का मानव जीवन में विशेष महत्व है। यदि लेखन की कला मानव के पास न होती तो सम्भवता संसार का समस्त ज्ञान किसी भी एक जगह पर मिलना मुश्किल था। परन्तु आज हम पूरे संसार के ज्ञान को जान समझ सकते हैं और आज लेखन की लम्बी दूरियोंको दोहा छंद ने आज पुनः कम कर दिया है। आज संसार में सूत्र, संकेतात्मक चिह्न एवं अन्य शोर्ट हेण्ड, जैसी लिपियों के कारण साहित्य में पर्याप्त संक्षिप्तता आ गयी है। इसमें आज दोहा भी अपनी पूरी ओजस्विता के साथ जुडा है। बडे-बडे भावों को कुछ ही शब्दों में बाँधकर दोहा आज समय के साथ कंधा मिलाकर चल रहा है।

आज साहित्य में आयी हुई बेमतलब की ऊब को दोहा कम करने में संभवता सफल होगा। ऐसी कामना के साथ दोहा काव्य मानव से जुडे प्रत्येक विषयों को अपने में बाँध रहा है और साहित की बिगड़ती हुई स्थिति को समय रहते सम्भालने का यत्न भी रहता है।

साहित्य की बदलती दशा के विषय में श्री रामानुज त्रिपाठी कहते हैं कि -

आपस में लडने लगे प्रत्यय, संधि, समास।
देख देखकर व्याकरण, रहता बहुत उदास।।(198)

आज मानव नयी-नयी संपत्ति जुटाने में लगा है और उसी के पीछे जीवन के सारे रंग भुला दिये हैं। मगर जो पुस्तैनी बनी-बनायी संपत्ति है उसकी जरा भी परवाह नही है। दोहाकार ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' जी कहते हैं कि -

ऊंचे महलों के शिखर उगी हुई वह घास ।
हरित छंद में लिख रही सदियों का इतिहास।।(199)
दर्पण का अस्तित्व है जैसे एक सराय।
कौन निरन्तर है वहाँ, छवि आये छवि जाय।।

आज चाटुकारिता और चमचागीरी की हवा सर्वत्र फैली हुई है। आज सामने आईना दिखाने का समय नहीं रहा है। यदि प्रशंसा और बख्शीश चाहते हो तो दर्पण की जगह अच्छी सी तस्वीर दिखाओं और कहों ''जनाब ये आप ही का प्रतिविम्ब है'' बस हो जाओ मालामाल। परन्तु जिसने मक्खन लगाने की यह कला सीखी ही नहीं वह दोनों हाथ मलता रह जाता है और स्वाँगी माल और प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेता है। दोहाकार ब्रज किशोर वर्मा कहते हैं -

भरे नहीं हमसे गये उल्टे सीधे स्वांग ।
वह महफिल में छा, गया गाकर ऊँट पटांग।।(200)
राजा के दरबार में नहीं नवाया शीश।
तभी हमें सबकी तरह मिली नहीं बख्शीश।।

अब वह ज़माना तो गया जब कवि और उनकी कविता दोनों ही दरबारी हुआ करते थे और अपने आश्रयदाता की प्रशस्ति ही गाया करते थे। परन्तु आज भी यह दोष कहीं न कहीं अवश्य व्याप्त ही है। साहित्य का राजनीति के साथ आदिकाल से ही सम्बंध रहा है और यह सम्बंध आज भी बना हुआ है जिसमें साधारण व्यक्ति की उत्पीडन को अभी भी दबाने की कोशिश होती है। परन्तु आज अधिकतर मानव समाज अपने अधिकारों को समझने लगा है। सरकार ने भी आरक्षण की नीति अपनाकर सबको बराबर न्याय देने की कोशिश की है। परन्तु सच्चाई तो स्वयं वही जानता है जिस पर बीतती है। भले ही आज हम आज़ादी के पचास वर्ष पूरे कर चुके हों मगर सच्ची मानव जीवन की आज़ादी पर अभी प्रश्न चिह्न ही लगा हुआ है। आज भी मानव अनेक उत्पीड़नों को सहन कर रहा है। यदि कोई इसके खिलाफ जाकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है तो उसकी क्या हालत होती है। यह बताते हुए डॉ. विष्णु विराट कहते हैं कि -

दाँत भींच कै किसन ने दियौ हथौडा तान ।
तोड़त गिट्टी तन गयौ ऐसौ उठौ उफान।।(201)
आजादी का काम की रसी कसी है चाम।
सदी बीसवीं में भई पीढ़ी नई गुलाम।।

मानव समाज में आज सर्वत्र दूषण भर गया है। भारत के गाँव कभी निश्छल मासूम, सीधे साधे हुआ करते थे। जन जीवन बड़ा ही सीधा और सच्चा हुआ करता था। मगर आज स्थिति विपरीत ही दिखाई देती है, जगह-जगह पर धोखा, घात और मानव में स्वार्थता का भाव निरंतर बढ़ता जा रहा है। जहाँ लोग दूसरे के दुःख से दुःखी और सुख से सुखी हुआ करते थे वही स्थिति यह भी विपरीत हो गयी है। दोहाकार डॉ. रामनिवास मानव क्षुब्ध होकर उस देहात को ढूंड रहे हैं -

कहाँ रहा वह गाँव अब कहाँ रही वह बात ।
बात-बात में घात है पात-पात उत्पात ।।[202]

समाज में हर व्यक्ति के अरमान लगातार कुचल रहे हैं। हर जगह आज होड़ लगी हुई है। मानव जीवन का अब कोई भी ऐसा अंग नहीं जिसमें चुनौती और होड़ न हों। आज पग पग पर नित नयीं विपदायें आ टकरातीं है। विपदायें भी उतनी ही बढ़ती जा रही हैं और मानव जीवन इन्हीं साधनों के बीच उलझ कर रह गया है।

डॉ. ''मानव'' आज मानव को सत्य और धर्म पर आस्था रखकर धैर्य रखने का आह्वान करते हैं उन्हे विश्वास है कि कभी-न-कभी तो भगवान तेरी सुध अवश्य लेगा-

सत्य में रख तू आस्था और धर्म में ध्यान ।
सुध लेगे दिन एक तो तेरी भी भगवान ।।[203]

आज निरंतर साहित्य को ह्रास होता देख डॉ. मानव दोहा छंद में इसकी प्रतिक्रिया करते हुए कहते हैं -

कविता बैठी हाट पर लिए पराई पीर ।
फैशन के इस दौर में सस्ते हुए कबीर ।।[204]
संकट है विश्वास का अब तो चारों ओर।
एक रुप सारे हुए, लेखक नेता, चोर ।।

जहाँ समाज में अनेक विषय साँप की तरह कुण्डली बनाकर मानव जीवन के चारों तरफ बैठे है। वैसे ही आज धर्म भी बड़ा ही ज्वलनशील हो गया है। देश के बडे-बडे फैसले अब धर्मनीत पर अटके हुए हैं। आज समाज में धार्मिक संतुलन इतना बिगड़ा हुआ है कि इसके पीछे मानवता ही नही, मानव जाति पूरी की पूरी खतरे में पड़ गयी है। परन्तु सच्चा धर्म क्या है उसे समझने की आज कोई कोशिश नहीं करता। श्री विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक' जी कहते हैं कि -

धर्म व्यक्तिगत मर्म है उसका सूक्ष्म स्वभाव ।
स्थूल रुप लेगा अगर, होगा ही टकराव ।।[205]

इसलिए आज साहित्यकार का धर्म को लेकर समाज के सामने एक बड़ा फर्ज़ वहन करने का है । अतः आज साहित्यकार अपनी लेखनी के माध्यम से समय समय पर जन जीवन को राह दिखाने का प्रयास करता है और निरंतर समाज को फटकारते हुए सही दिशा भी दिखाता है। 'बटुक' जी कहते हैं -

खून बहाना ठीक है नर का कह बेशर्म ।
मंदिर मस्जिद हैं बड़े या मानव का मर्म ।।[206]
मानव दानव की तरह नाचे बन बेशर्म ।
लड़े धर्म के नाम पर कैसा है वह धर्म ।।
ईश्वर हो या हो खुदा हममें इनका नूर ।
क्या ये लडने को हमें करते हैं मजबूर ।।

आदि आदि अनेक ऐसे दोहे हैं जिनमें धर्म को लेकर दोहाकार समाज को राह दिखाने की कोशिश करता है। मानव जीवन की अनेक समस्याओं में धार्मिक समस्या भी एक विकट समस्या है जिसे हम सबको एक साथ मिलकर ही सुलझाना पड़ेगा और साहित्य से अच्छा माध्यम क्या हो सकता है। जो एक ही बात को जन-जन तक पहुंचा सके आज धार्मिक उपदेशों की अपेक्षा मानवीय उपदेशों की ज़रुरत है । एक मावन का दूसरे मानव के प्रति कैसा व्यवहार हो यह सीखने सिखाने की जरुरत है दोहाकार कहता है -

पास खडा इंसान तो तुझे न पडता सूझ ।
उस अदृश्य भगवान की, रहा पहेली बूझ ।।[207]
प्रभु-भक्तों के बीच का सेतु नहीं है धर्म ।
जीवन-दर्शन सहज यह, अनुशासन का मर्म ।।
अलग-अलग हैं जब तक, खयालात-जज़्बात ।
दो कौमों की एकता, है सपनों की बात ।।

भारतीय संस्कृति में मंदिर और मस्जिद बडी ही शान्त जगह मानी जाती रही है। मगर आज इसके विपरीत मान्यता हो गयी है। आज मंदिर मस्जिद और धर्म का नशा अफीम के नशे सा हो गया है जिसका परिणाम भयानक ही होता है। समाज में फैली ये असंगतियाँ राजनीति के ही खेल हैं जिसमें साधारण जनजीवन तबाह हुआ जा रहा है। महाभारत का यह खेल देखते हुए भी हम आँखों में पट्टी बंधे धृतराष्ट्र बनें हुए हैं। और आज अनेक शकुनी अपनी चाल फेंककर लोकतंत्र की ऐसी तैसी कर रहे हैं। इसलिए हमें आज राह दिखाने वाले साहित्य की आवश्यकता है जिससे मानव जीवन कल्याणकारी बने। अतः इस आवश्यकता को पूर्ण करने में दोहा छंद अवश्य ही श्रेष्ठ भूमिका निभा रहा है।

संदर्भ सूची

1) म. प्र. साहित्य सरोवर पत्रिका, अंक-सितम्बर 2001
सं. - कमलकान्त सक्सेना, पृष्ठ 26

2) वही '' '' '' पृष्ठ 26

3) वही '' '' '' ''

4) वही '' '' '' ''

5) सप्तपदी-5, सं.- देवेन्द्र शर्मा 'इंद्र' (दोहा संकलन),
दोहाकार : कृष्णेश्वर डींगर, दो. सं. - 39

6) वही '' '' '' दो. सं.-19

7) वही '' श्रीकृष्ण शर्मा दो. सं.-1

8) वही '' '' '' दो. सं.-7

9) वही '' '' '' दो. सं.-12

10) वही '' माहेश्वर तिवारी दो.सं.-11

11) वही '' '' '' दो.सं.-12

12) वही '' '' '' दो.सं.-16

13) वही '' आचार्य भगवत दुबे दो.सं.-21

14) वही '' आचार्य भगवत दुबे दो.सं.-39

15) वही '' कैलास गौतम दो.सं.-21

16) दोहा दशक-2 सं.-अशोक 'अंजुम' (दोहा संकलन)
दोहाकार - रामानुज त्रिपाठी दो.सं.-16

17) सप्तपदी-5, सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' (दोहा संकलन)
दोहाकार - कैलाशगौतम दो.सं.-58

18) वही '' वेदप्रकाश पाण्डेय दो.सं.-90

19) वही '' उर्मिलेश दो.सं.-36

20) वही '' '' '' दो.सं.-34

21) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), सं.-अशोक 'अंजुम'
दोहाकार - सुरेश कुमार शुक्ल, दो.सं.-78

22) वही '' '' '' दो.सं.-13

23) वही '' '' '' दो.सं.-16

24) वही " " " दो.सं.-15

25) वही " " अनंतराम मिश्र 'अनन्त' दो.सं.-75

26) वही " " " दो.सं.-21

27) वही " " ध्रुवेन्द्र भदौरिया दो.-42

28) वही " " " दो.-33

29) वही " " " दो.-8

30) वही " " ओम वर्मा दो.-9

31) वही " " ब्रजकिशोर पटेल दो.-14,15

32) वही " " रामानुज त्रिपाठी दो.-32,33

33) वही " " " दो.-32,33

34) वही " " " दो.-38

35) वही " " " दो.-91

36) 'तुज़ुक हज़ारा' दोहा संग्रह, विश्व प्रकाश दीक्षित दो.217

37) वही " " " दो.-221

38) वही " " " दो.-230

39) वही " " " दो.-514

40) वही " " " दो.-521

41) वही " " " दो.-526

42) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन), सं.-देवेन्द्र शर्मा, 'इन्द्र'
दोहाकार : पाल भसीन दो.-94

43) वही " " " दो.-94

44) वही " " कुमार रवीन्द्र दो.-14

45) वही " ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' दो.-101

46) "हम जंगल के फूल"(दोहा संग्रह) ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' दो.-60

47) वही " " " दो.-92

48) वही " " " दो.-396

49) वही " " " दो.-454

50) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन) सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार - जहीर कुरेशी दो.-39

51) 'बोलो मेरे राम' (दोहा संग्रह) रामनिवास 'मानव' दो.-71

52) वही '' '' '' दो.-84

53) वही '' '' '' दो.-315

54) वही '' '' '' दो.-306

55) वही '' '' '' दो.-310

56) ''सारांश'' (दोहा संग्रह) रामेश्वर 'हरिद' पृष्ठ-11

57) वही '' '' '' पृष्ठ-22

58) वही '' '' '' पृष्ठ-24

59) वही '' '' '' पृष्ठ-30

60) वही '' '' '' पृष्ठ-34

61) ''युवको! सोचो!'' (दोहा संग्रह), महेश दिवाकर पृष्ठ-27

62) वही '' '' '' पृष्ठ-28

63) ''जैसे'' (दोहा संग्रह) हरेराम 'समीप' दो.-56

64) वही '' '' '' पृष्ठ-91

65) वही '' '' '' पृष्ठ-173

66) वही '' '' '' पृष्ठ-238

67) वही '' '' '' पृष्ठ-285

68) 'तुज़ुक हज़ारा' '' '' पृष्ठ-536

69) वही '' '' '' पृष्ठ-160

70) वही '' '' '' पृष्ठ-162

71) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन) सं. देवेन्द्र शर्मा, 'इन्द्र'
दोहाकार - कृष्णेश्वर डींगर दो.-9

72) वही '' '' '' दो.-61

73) वही '' '' '' दो.-66

74) वही '' '' '' दो.-82

75) वही '' '' '' दो.-87

76) वही '' '' श्रीकृष्ण शर्मा दो.-22

77) वही '' '' '' दो.-25

78) वही '' '' माहेश्वर तिवारी दो.-2

79) ''जैसे''(दोहा संग्रह) हरेराम 'समीप' दो.-83

80) वही '' '' '' दो.-154

81) वही '' '' '' दो.-130

82) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन) सं.-देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार–दिनेश शुक्ल दो.-9

83) वही '' '' '' दो.-11

84) वही '' '' '' दो.-15

85) वही '' '' '' '' ''

86) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन) सं.-देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार–आचार्य भगवत दुबे-8

87) वही '' '' '' दो.-33

88) वही '' '' '' दो.-90

89) वही '' '' कैलास गौतम दो.-84

90) वही '' '' '' दो.-80

91) वही '' '' वेदप्रकाश पाण्डेय दो.-23

92) वही '' '' '' दो.-60

93) वही '' '' '' दो.-40

94) दोहादशक-2 (दोहा संकलन) सं.-अशोक अंजुम
दोहाकार-अनंतराम मिश्र ''अनन्त'' दो.-31

95) वही '' '' '' दो.-54

96) वही '' '' '' दो.-7,23,32

97) वही '' '' ब्रजकिशोर पटेल दो.-79

98) वही '' '' दिनेश रस्तोगी दो.-66

99) वही '' '' '' दो.-76

100) वही '' '' शिवशरण दुबे दो.-13

101) वही '' '' '' दो.-29

102) ''हम जंगल के फूल'' (दोहा सतसई) ब्रजकिशोर वर्मा, दो.-87

103) वही '' '' '' दो.-311

104) ''युवको! सोचो! (दोहा संग्रह) महेश दिवाकर पृष्ठ-43

105) ''विराट सतसई''विष्णु विराट चतुर्वेदी, दो.-678
106) 'जैसे' (दोहा संग्रह) हरेराम समीप, दो.-102
107) वही '' '' '' दो.-112
108) वही '' '' '' दो.-120
109) वही '' '' '' दो.-144
110) वही '' '' '' दो.-157
111) वही '' '' '' दो.-361
112) ''बटुक की कटुक सतसई''विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक'
113) वही '' '' '' दो.-371
114) ''तुज़ुक हज़ारा'' विश्वप्रकाश दीक्षित दो.-240
115) वही '' '' '' दो.-242
116) वही '' '' '' दो.-749
117) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन) सं.- देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार - पाल भसीन, दो.-21
118) वही '' '' जहीर कुरेसी दो.-43
119) वही '' '' '' दो.-79
120) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन) सं.-देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार - कृष्णेश्वर डींगर. दो.-43
121) वही '' '' श्रीकृष्ण शर्मा दो.-62
122) वही '' '' माहेश्वर तिवारी दो.-68
123) वही '' '' आचार्य भगवत दुबे, दो.-12
124) वही '' '' '' दो.-13
125) वही '' '' वेद प्रकाश पाण्डेय दो.-9
126) वही '' '' उर्मिलेश दो.-97
127) ''दोहा दशक-2'' (दोहा संकलन) सं. अशोक 'अंजुम'
दोहाकार-सुरेश कुमार दो.-72
128) वही '' '' अनंतराम मिश्र 'अनन्त' दो.-47
129) वही '' '' '' दो.-66
130) वही '' '' दोहाकार-ध्रुवेन्द्र भदौरिया दो.-47

131) वही '' '' रामानुज त्रिपाठी, दो.-41

132) ''सारांश'' (दोहा संग्रह) रामेश्वर 'हरिद', पृष्ठ-15

133) ''हम जंगल के फूल'' (दोहा सतसई) ब्रजकिशोर वर्मा ''शैदी'' दो.-118

134) वही '' '' '' दो.-265

135) ''युवको! सोचो! (दोहा संग्रह) महेश दिवाकर, पृष्ठ-47

136) जनप्रचलित दोहा

137) 'बोलो मेर राम' (दोहा संग्रह) रामनिवास 'मानव' दो.-272

138) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन) सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार - भाल पसीन दो.-13

139) वही '' '' '' दो.-24

140) वही '' '' '' दो.-28

141) वही '' '' '' दो.-57

142) वही '' '' कुमार रवीन्द्र, दो.-6

143) वही '' '' '' '' ''

144) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन) सं. देवेन्द्र शर्मा ''इन्द्र''
दोहाकार - कृष्णेश्वर डींगर दो.-22

145) वही '' '' श्रीकृष्ण शर्मा दो.-56

146) वही '' '' माहेश्वर तिवारी दो.-23

147) वही '' '' आचार्य भगवत दुबे दो.-76

148) वही '' '' कैलाश गौतम दो.-1

149) वही '' '' उर्मिलेश दो.-9

150) वही '' '' '' दो.-14

151) वही '' '' अनंतराम मिश्र 'अनंत' दो.-89

152) 'दोहा दशक-2' (दोहा संकलन) ध्रुवेन्द्र भदौरिया, दो.-90

153) 'सप्तपदी-2' (दोहा संकलन) सं.- देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'-
दोहाकार - रामानुज त्रिपाठी . दो.-59

154) वही '' '' '' दो.-78

155) ''सारांश''(दोहा संग्रह) रामेश्वर 'हरिद' पृष्ठ-50

156) 'हम जंगल के फूल' (दोहा सतसई) ब्रज किशोर वर्मा, दो.-154

157) ''तिराहे पर खडा दरख्त'' '' '' दो.-62

158) वही '' '' '' '' दो.-40

159) ''विराट सतसई'' विष्णु विराट चतुर्वेदी दो.-384

160) ''जैसे'' (दोहा संग्रह), हरेराम समीप दो.-201

161) वही '' '' '' '' दो.-292

162) वही '' '' '' '' दो.-444

163) ''बटुक की कटुक सतसई' (दोहा संग्रह), विश्वप्रकाश दीक्षित दो.173

164) वही '' '' '' '' दो.-692

165) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन) सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'

दोहाकार - विश्वप्रकाश दीक्षित दो.-13

166) वही '' '' '' कुमार रवीन्द्र दो.-40

167) वही '' '' '' हस्तीमल हस्ती दो.-36

168) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन) सं.-देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'

दोहाकार - कृष्णेश्वर डींगर दो.-62

169) वही '' '' श्रीकृष्ण शर्मा दो.-15

170) वही '' '' '' '' दो.-46

171) वही '' '' '' '' दो.-86

172) वही '' '' माहेश्वर तिवारी दो.-38

173) वही '' '' आचार्य भगवत दुबे दो.-32

174) वही '' '' वेदप्रकाश पाण्डेय दो.-90

175) वही '' '' उर्मिलेश दो.-43

176) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन) सं. अशोक 'अंजुम' -

दोहाकार - सुरेश कुमार दो.-9

177) वही '' '' शिवशरण दुबे दो.-51

178) 'सारांश' (दोहा संग्रह) रामेश्वर हरिद पृष्ठ-36

179) ''हम जंगल के फूल'' ब्रजकिशोर वर्मा 'शैदी' दो.-2

180) वही '' '' '' ''

181) ''जैसे'' हरेराम समीप दो.-86

182) वही '' '' '' दो.-87

183) वही '' '' '' '' दो.-216

184) वही '' '' '' '' दो.-264

185) 'बटुक की कटुक सतसई' विश्व प्रकाश दीक्षित ''बटुक'' दो.-302

186) वही '' '' '' '' दो.-307

187) 'तुज़ुक हज़ारा' '' '' '' '' दो.-33

188) वही '' '' '' '' दो.-39

189) वही '' '' '' '' दो.-38

190) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन) सं.-देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
दोहाकार-जहीर कुरेसी दो.-3

191) वही '' '' कृष्णेश्वर डींगर दो.-6

192) वही '' '' माहेश्वर तिवारी दो.-26

193) वही '' '' '' '' दो.-27

194) सप्तपदी-5, सं. देवेन्द्र शर्मा, दोहाकार-माहेश्वर तिवारी दो.96

195) वही '' '' '' उर्मिलेश दो.-69

196) दोहादशक-2, सं. अशोक अंजुम, दोहाकार ओम वर्मा दो.-52

197) वही '' '' '' '' दो.-96

198) वही '' '' '' रामानुज त्रिपाठी दो.-11

199) ''हम जंगल के फूल'', ब्रजकिशोर वर्मा ''शैदी'' दो.-11

200) वही '' '' '' '' दो.-291

201) ''विराट सतसई'', विष्णु विराट चतुर्वेदी दो.-464

202) 'बोलो मेरे राम', रामनिवास 'मानव' दो.-9

203) वही '' '' '' '' दो.-384

204) वही '' '' '' ''

205) ''तुज़ुक हज़ारा' विश्व प्रकाश दीक्षत 'बटुक' दो.-300

206) वही '' '' '' '' दो.-307

207) वही '' '' '' '' दो.-336

आधुनिक दोहाकार

1) श्री विश्वपकाश दीक्षित 'बटुक'
2) डॉ. अन्तराम मिश्र 'अनन्त'
3) डॉ. रामनिवास 'मानव'
4) श्री हरेराम समीप
5) डॉ. महेश दिवाकर
6) आचार्य रामेश्वर 'हरिद'
7) डॉ. पाल भसीन
8) कुमार रवीन्द्र
9) श्री ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी'
10) श्री दिनेश शुक्ल
11) हस्तीमल हस्ती
12) जहीर कुरेशी
13) राजकुमार शर्मा
14) विभाकर आदित्य शर्मा
15) बाबू राम शुक्ल
16) देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
17) योगेन्द्र दत्त शर्मा
18) हरीश निगम
19) भारतेन्दु मिश्र
20) डॉ. कुँअर 'बेचैन'
21) डॉ. राधेश्याम शुक्ल
22) लक्ष्मी खन्ना 'सुमन'
23) डॉ. वद्यिाबिन्दु सिंह
24) डॉ. श्याम निर्मम
25) डॉ. राजेन्द्र गौतम
26) जगत् प्रकाश चतुर्वेदी
27) राम बाबू रस्तोगी
28) घमंडीलाल अग्रवाल

29) डॉ. अजय जनमेजय

30) मनोज 'अबोध'

31) गंगा प्रसाद शर्मा

32) श्री सुरेशकुमार शुक्ल 'संदेश'

33) अशोक 'अंजुम'

34) डॉ. ध्रुवेन्द्र भदौरया

35) श्री ओम वर्मा

36) ब्रज किशोर पटेल

37) दिनेश रस्तोगी

38) श्री रामानुज त्रिपाठी

39) शिवशरण दुबे

40) श्री कृष्ण शर्मा

41) श्री कृष्णेश्वर डींगर

42) माहेश्वर तिवारी

43) आचार्य भगवत दुबे

44) कैलाश गौतम

45) डॉ. वेद प्रकाश पाण्डेय

46) डॉ. उर्मिलेश

47) सूर्य भानु गुप्त

48) यश मालवीय

49) डॉ. गोपाल दास नीरज

50) श्री चन्द्रसेन विराट

51) शिवओम अम्बर

52) राजगोपाल सिंह

53) बलदेव बंशी

54) डॉ शैल रस्तोगी

55) आचार्य बलदेवराज 'शांत'

56) सूर्य कुमार पाण्डेय

57) लक्ष्मीशंकर वाजपेयी

58) विज्ञान व्रत

59) राजेन्द्र वर्मा

60) एहतराम इस्लाम

61) जयचक्रवर्ती

62) विजय मेरठी

63) श्री सूर्यदेव पाठक 'पराग'

64) शिवकुमार पराग

65) जयकुमार रुसवा

66) डॉ. माताप्रसाद

67) श्री हरीलाल मिलन

68) सतपालसिंह चौहान

69) नरेन्द्र श्रीवास्तव

70) चन्द्रपाल शर्मा शीलेर

71) सुभाष वर्मा

72) रसूल अहमद सागर

73) अशोक गीते

74) डॉ. गोपाल बाबू शर्मा

75) घमण्डी लाल अग्रवाल

76) डॉ. वर्षा सिंह

77) डॉ. सुश्री शरदसिंह

78) डॉ. राजकुमारी शर्मा 'राज'

79) डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी

80) डॉ. सुशील कुमार पाण्डेय

81) सतीश गुप्ता देवरिया

82) डॉ. पंकज परिमल

83) भगीरथ शुक्ल

84) डॉ. राजकुमार निजात

85) सतीश प्रसाद सिन्हा

86) अनिल असीम

87) नरेन्द्र आहूजा विवेक

88) किशोर कुमार कौशल

89) वीरेन्द्रसिंह गुम्बर

90) नवनीत आर. ठाकुर

91) डॉ. मिथिलेश दीक्षित

92) कपूर चतुरपाठी

93) रत्नाकर शास्त्री

94) भारतेन्दु मिश्र

95) अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'

96) भगवानदास एज़ाज़

97) निदा फाज़ली

98) नाविक हमज़ापुरी

99) ज़फर गोरखपुरी

100) डॉ. फराज हामिदी

101) इब्राहीम अश्क

102) कासिम नदीम

103) निसार जयराजपुरी

104) मिफतोह आजमी

105) डॉ. मुइनुद्दीन शाहीन

106) शम्स फरुखाबादी

107) संजयकुमार पंकज

108) जवाहर इन्दु

109) कोमल शास्री

110) विजय लक्ष्मी 'विभा'

111) शशि आनंद अलबेला

112) डॉ. अमरनाथ वाजपेयी

113) अशोक आलोक

114) आशीष दशोत्तर

115) कृष्ण स्वरुप शर्मा

116) गिरि मोहन गुरु